

53-12

6-0

59-12

75-0-0

734-12-0

درفه

13-

ک

مدله

مدله

12

نیزه سحر

کله =

م

کله =

کله

کله

نم ریم

کوسه اوت

یکه

م

ऐन्द्रस्येव शरासनस्य दधती मध्ये ललाटे प्रभां
 प्रौक्तीं कान्तिमनुष्णगोरिव शिरस्यातन्वती सर्वतः।
 एषाऽसौ त्रिपुरा हि हृदि द्युतिरिवोष्णांशोः सदाहःस्थिता
 किन्ध्यान्तः सहसा पदैस्त्रिभिर्घं ज्योतिर्मयी वाङ्मयी॥१॥

ललाटे मध्ये ललाटे के मध्य में

ऐन्द्रस्य इन्द्र के

शरासनस्य धनुष के

इव समान

प्रभां प्रभा को

दधती धारण करती हुई,

शिरसि शिर में

अनुष्णगोः सूर्य के चंद्रमा के

इव समान

प्रौक्तीं निर्मल श्वेत

कान्तिं दीप्ति को

सर्वतः सब ओर से

अतन्वती विस्तारती हुई

एषाऽसौ यही वह (जो प्रत्यक्ष

है और जिसका वर्णन

प्रारंभ किया जाता है)

त्रिपुरा त्रिपुरा भगवती

(तीनों में व्यापक)

See Sloka no: 16

Sloka 18

सदा नित्य

अहःस्थिता दिन की अवस्था

में ठहरी हुई

(नित्योद्दिष्ट)

ज्योतिर्मयी

वाङ्मयी

प्रकाशमय (तथा)

वाणीमय

(विमर्शमय)

हृदि उष्णांशोः

द्युतिरिव

हृदय में

सूर्य के समान

तेजस्वी

नः

हमारे

संघं

पाप को

त्रिभिः

तीन

पदैः

पदों से

1. ललाटे, शिर, हृदय
 2. ऐं, क्लीं, सौं

सहसा

शीघ्र ही

किन्ध्यात् (पाप को) नष्ट करे॥१॥

या मात्रा त्रपुसीलता तनुलसत्तन्तटिथतिस्पर्धिनी
 वाग्बीजे प्रथमे स्थिता तव सदा तामन्महे ते वयम्।
 शक्तिः कुण्डलिनीति विश्वजननव्यापारबद्धोद्यमा
 ज्ञात्वेत्थं न पुनः स्पृशन्ति जननी गर्भेऽर्भकत्वं नराः॥२॥

या जो
 * त्रपुसीलता - रंगवेलु की (गुणवर्ण कपूरी)
 तनु - सूक्ष्म
 उल्लसत् - निकलती हुई
 तंत - तार के
 उटिथति - प्रारंभ से के साथ
 स्पर्धिनी समानता वाली
 मात्रा प्रेक्षा (मात्रा)
 (ऐं पहिली मात्रा बाहर
 निकलने को तैयार,
 सृष्टि रूप)
 तव तुम्हारे
 ६) प्रथमे वाग्बीजे पहिले वाणी के
 स्थिता स्थित है,
 तां उसी मात्रा को
 ते वयं वह हम (उत्कृष्ट भक्त)
 सदा नित्य
 मन्महे विमर्श करते हैं

कुण्डलिनी कुण्डलिनी रूप
 (प्रियभाव में लीन, प्रकाशमान
 और अपनी इच्छा से ही जगत् रूप
 में परिवर्तित होने वाली)
 शक्तिः इति शक्ति
 विश्व जनन - जगत् के उत्पन्न करने के
 व्यापार - काम में
 बद्धोद्यमा किये हुए उद्योग वाली,
 इत्थं ज्ञात्वा इस प्रकार (के स्वरूप को)
 जानकर
 नराः मनुष्य (भक्तजन)
 जननी गर्भे माता के गर्भ में
 प्रर्भकत्वं बालभाव को
 न पुनः पुनः नहीं
 न स्पृशन्ति स्पर्श नहीं करते हैं
 (प्रार्थित मुक्त हो जाते हैं)॥२॥

* चमकीली और अतिसूक्ष्म तारों
 के विस्तार वाली
 २) चार वाणिज्य - परा, पश्यन्ती,
 मध्यमा, वैश्वरी.

दृष्ट्वा संभ्रमकारिवस्तुसहसा ऐ ऐ इति व्याहृतं
येनाकूतवशादपीह वरदे! बिन्दुं विनाऽप्यक्षरम्।
तस्यापि ध्रुवमेव देवि! तरसा जाते तवाऽनुग्रहे
वाचः सूक्तिसुधारसद्रवमुचो निर्यान्ति वक्त्राम्मुजात्॥३॥

हे वरदे!	हे वर (भोग, मोह)	तस्यापि	उसके भी
येन	देने वाली!	वक्त्राम्मुजात्	मुखकमल से
इह	जिसने	हे देवि!	हे कीउनशील देवी
संभ्रमकारि-	इस संसार में	तरसा	शीघ्र ही
वस्तु	कोई आश्चर्यजनक	तव-	तुम्हारे
दृष्ट्वा	वस्तु (पदार्थ)	अनुग्रहे	अनुग्रह के (दया)
प्राकृत -	देखकर	जाते	उत्पन्न होने पर
वशात्	भय या हर्ष के	सूक्ति-	प्रच्छी वाणीरूपी
अपि	अभिप्राय से	सुधारस-	अमृतरस के
सहसा	भी	द्रव मुचो	प्रवाह को देने वाली
ऐ ऐ इति	शीघ्रता से	वाचः	वाशियां
बिन्दुं विना	ऐ ऐ इस प्रकार	ध्रुवं एव	निश्चय ही
अपि	बिन्दु के बिना	निर्यान्ति	निकलती हैं॥
अक्षरम्	भी		
व्याहृतं	अक्षर का		
	उच्चारण किया हो		

(१) जब कोई मनुष्य किसी आश्चर्यजनक
या भयदायक वस्तु को देखता है तो उसके
मुख से प्रकट होता है ऐ ऐ पद निकलता
है, यही ऐं बीज बिन्दु के बिना है॥

हे वरदे! किसी आश्चर्यजनक वस्तु को देखकर
शीघ्र ही 'ऐं' के स्थान पर जिसने बिना बिन्दु
के ही "ऐं ऐं" किसी हर्ष या भय के अभिप्राय
से भी अज्ञान में भी उच्चार किया हो अथवा
ज्ञान की उत्पत्ति के बिना ही 'ऐं ऐं' का विमर्श
किया हो (उसको भी हे देवि! अवश्य ही यदि
तुम्हारा अनुग्रह उदय में आया हो तो उसके
मुख कमल से प्रवृत्त आदि वाशियां —
ज्ञानमय अमृतरस चित् रस को संचने
वाली प्रसर करती हैं॥३॥

यन्नित्ये तव कामराजमपरं मन्त्रादरं निष्कलम्
 तत्सारस्वतमित्येवैति विरलः कश्चिद्बुधश्चेदुवि।
 प्रारब्धानं प्रतिपर्वसत्यतपसो यत्कीर्तयन्तो द्विजाः
 प्रारम्भे प्रणवास्पद प्रणयित्वा नीटवोच्चरन्ति स्फुटम्॥४॥

(हे) नित्ये हे प्रविनाशिनी,
 यत् तव जो तुम्हारा
 अपरं दूसरा (कीं)
 निष्कलं कलना रहित
 (कल रहित)
 कामराज अभिलाषा पूरकरने वाला
 (कामराज नाम वाला)
 मन्त्रादरं मन्त्र श्रद्धा है (ईं)

यत् जो (उसी को)
 द्विजाः ब्राह्मण
 प्रतिपर्व हर एक पर्व पर
 सत्यतपसो सत्यतपस् नामी ऋषि का
 प्रारब्धानं नाम लेकर
 कीर्तयन्तः कीर्तन करते हैं
 प्रारम्भे प्रारम्भ में
 प्रणवास्पद ओंकार के स्थान के
 प्रणयित्वा सम्बन्धभाव को
 नीटवा ले जाकर
 स्फुटम् स्फुट प्रकार से
 उच्चरन्ति उच्चारण करते हैं

तत् उस
 सारस्वतम् सारस्वती के (मन्त्र को)
 इति इस प्रकार
 कश्चित् कोई यदि
 विरलः विरला ही
 बुधः ज्ञानवान्
 भुवि संसार में
 चेत् यदि
 प्रवैति जाने, श्री

विरलः (वह) विरला ही (मूर्ख प्रणवाबालक भी)

बुधः ज्ञानवान्
 (बन जाता है)

यत्सद्यो वचसां प्रवृत्तिकारो दृष्टप्रभावं बुधै-
 हतार्तीयकमहं नमामि मनसा त्वद्बीजमिन्दु प्रभम्।
 अष्टवैर्वोऽपि सरस्वतीमनुगतो जाड्याम्बु विच्छिन्नये
 गौ प्राग्दो गिरि वर्तते स नियतं योगं विना सिद्धिदः॥ ५॥

यत्	जो (बीज)	अनुगतो	पीछे गया हुआ
सद्यः	तटहाणात्	और्वोऽपि	(१) वाउव अग्नि भी
वचसाम्	वाणियों के		(२) औ बीज तुम्हें भी
प्रवृत्तिकारो	प्रवृत्त करने में	जाड्याम्बु	अज्ञान रूपी जलों के
बुधैः	बुद्धिमानों से	विच्छिन्नये	सुरवाने के लिये
दृष्टप्रभावम्	देखे हुए प्रभाव		(नष्ट करने के लिये)
	वाला (है)	अस्तु	(समर्थ) हो
अहं	मैं	स गौ प्राग्दो	वह गौ प्राग्दो
वत	(उस) तुम्हारे	गिरि	वाणी के अर्थ में
बीजम्		वर्तते	प्रवर्तन होता है
तार्तीयकम्	तीसरे (सौ बीज)	नियतं (और)	अवश्य ही
इन्दु प्रभम्	चन्द्रमा की (१)	योगं विना (१)	योग के विना
	दीप्ति वाले	योगं विना (२)	जो (गौ बीजाक्षर)
बीजम्	बीजाक्षर को		गकार के विना (अर्थात्
मनसा	मन से		औ बीजाक्षर)
नमामि	नमस्कार करता हूँ,	सिद्धिदः	सिद्धि को देने वाला है॥
सरस्वती	सरस्वती नदी के		५॥

✱ सरस्वती के अनुग्रह को दिलीप
 १) शीतल और आनन्ददायक प्राप्त करने वाला

वाउव अग्नि - सविज्ञान रूपी अग्नि जो सभी भेदों को नाश करती है

एकैकं तव देवि! बीजमनघं सव्यञ्जनाव्यञ्जनं
 कूटस्थं यदि वा न पृथक्क्रमगतं यद्वा स्थितं व्युत्क्रमात्।
 यं यं काममपेक्ष्य येन विधिना केनापि वा चिन्तितम्
 जप्तं वा सफली करोति सहसा तं तं समस्तं नृणाम्॥६॥

देवि!	हे देवी!	३, येन केनापि	जिस किसी भी
तव	तुम्हारा	विधिना	विधि से
एकैकं	प्रत्येक	चिन्तितं	चिन्तन किया हुआ
अनघं	दोषरहित	वा जप्तं वा	या जप किया हुआ
बीजं	बीजाक्षर	नृणाम्	मनुष्यों की
सव्यञ्जन-	व्यञ्जनसहित (या)	तं तं } समस्तं }	उस उस (सभी अभिलाषाओं को
प्रव्यञ्जनं	व्यञ्जनरहित (या)	सहसा	तत्क्षणात्
कूटस्थं	कूटस्थ बीज में ठहरा हुआ जैसे ऐं, ओं	सफली करोति	सफल करता है॥

यदि वा	या अगर
१) पृथक्- क्रमगतं	पृथक् क्रम में गया हुआ,
यद्वा,	या
२) व्युत्क्रमात्	उल्टे क्रम से (प्रक्रम)
स्थितं	ठहरा
यं यं	जिस किसी
कामं	अभिलाषा की
अपेक्ष्य	अपेक्षा करके

(१) क्रम, (२) प्रक्रम (३) क्रमाक्रम

वामे पुस्तकधारिणी ममयदां साक्षस्त्रजं दक्षिणे
 भक्तेभ्यो वरदानपेपुलकरं कर्पूरकुन्दोज्ज्वलाम्।
 उज्जृम्भाम्बुजपत्रकान्तनयनस्निग्धप्रभालोकिनीम्
 ये त्वामम्ब! न प्रीलयन्ति मनसा तेषां कवित्वं कुतः॥७॥

अम्ब!	हे माता!	स्निग्ध -	मनमोहक
ये	जो	प्रभा -	दीप्ति से
त्वाम्	तुम्हारा	प्रालोकिनी	देखती हुई
वामे	बायें हाथ में	(५) अभयदां	जन्ममरण का भय
१) पुस्तकधारिणी	पुस्तकधारण करती हुई,	मनसा	मन से
	किये हुए	न प्रीलयन्ति	अभ्यास नहीं करते हैं
२) दक्षिणे	दायें हाथ में	तेषां	उन (अज्ञानियों को)
साक्षस्त्रजं	अक्षमालाधारण (जयमाला)	कवित्वं	सर्वज्ञता
भक्तेभ्यो	भक्तों को	कुतः?	कहां मिल सकती है?
३) वरदान -	वर देने के लिये		(नहीं मिल सकती)
पेपुलकरं	कोमल हाथ वाली		
कर्पूरकुन्द -	कमल कर्पूर और		
	कुन्दपुष्प की भान्ति		
उज्ज्वलां	दीप्तिमान		
उज्जृम्भ -	विकसित		
	(खिले हुए)		
अम्बुज -	कमल के		
पत्र -	पत्ते जैसी		
कान्तनयनां	सुन्दर नेत्रों वाली की		

७) इस ध्यान में देवी का चतुर्भुज ध्यान है, और उसके चार हाथों में पुस्तक, अक्षमाला, वर, अभय दिरवाया गया है॥

ये त्वां पाण्डुरपुण्डरीकपटलस्पष्टभिरामप्रभां
 सिञ्चन्तीममृतद्रवैरिव शिरो ध्यायन्ति मूर्ध्नि स्थिताम्।
 प्रश्नान्तं विकटस्फुटाक्षरपदा निर्यान्ति वक्त्राम्बुजात्
 तेषां भारति! भारती सुरसरित्कल्लोललोलोर्मिवत्॥८॥

भारति!	हे सरस्वती,	विकट -	बड़े (गम्भीर)
ये	जो (भक्त)	स्फुट -	साफ स्पष्ट
त्वां	तुम्हारा	प्रक्षरपदा	प्रक्षरों और पदों वाली
पाण्डुर -	सफेद	भारती	वाणी
पुण्डरीक -	कमलों के	सुरसरित्	प्राकाशगंगा की
पटल -	समूह जैसे	कल्लोल -	चञ्चल तरंगों की तरह
स्पष्ट -	निर्मल	लोल }	
प्रभिराम -	सुन्दर	ऊर्मिवत्	तरङ्गों की तरह
प्रभा	दीप्ति वाली,	प्रश्नान्तं	बैरोक निरन्तर
प्रमृतद्रवैः }	मानो अमृत	निर्याति	निकलती है।
इव }	के प्रवाहों से		
शिरः	सिर को		
	(हृदयान्त को)		
सिञ्चन्तीम्	सींचती हुई,		
मूर्ध्नि	ललाट में		
स्थिताम्	ठहरी हुई (का)		
ध्यायन्ति	ध्यान करते हैं		
तेषां	उन के		
वक्त्र -	मुख		
प्रम्बुजात्	कमल से		

ये सिन्दूर पराग पुञ्ज पिहितं त्वत्तेजसा यामिमां
 उर्वी चापि विलीनयावकरस प्रस्तारमगतामिव।
 द्यावन्ति पश्यन्ति क्षणमन्यनन्यमनसस्तेषामनङ्गज्वर-
 क्लान्तास्वस्तकुरङ्ग-शावकदृष्टो वश्या भवन्ति स्फुटम्॥९॥

ये जो (भक्त)

त्वत्-	तुम्हारे
तेजसा	तेज से
द्यां	प्राकाश को
सिन्दूर-	सिन्दूर की
पराग-	धूलि के (गर्द)
पुञ्ज-	समूह से
पिहितं	छिपा हुआ (छिपा)
उर्वी चापि	पौर पृथ्वी को भी
विलीन-	पिघले हुए
यावकरस-	लातारस के (सोलुत कपूरी)
प्रस्तार-	विस्तार में
मगतां इव	डूबी हुई जैसी
क्षणम् अपि	एक क्षण भी
पश्यन्ति	देखते हैं,
तेषां	उन
अनन्यमनसः	एकाग्र मन वाले (भक्तों को)

अनङ्ग-	कामदेव के
ज्वर-	सन्ताप से
क्लान्ताः	पीड़ित
स्वस्त-	उरे हुए
कुरङ्ग-	हिरण के
~~पुञ्ज~~	
शावक-	बच्चों जैसी
दृष्टः	आंखों वाली
(सिन्दूर प्राक्तियां)	
स्फुटं	प्रत्यक्षरूप में
वश्या	वश
भवन्ति	हो जाती हैं॥

चञ्चत्काञ्चनकुण्डलाङ्ग-दधरामाऽऽबद्धवाञ्चीस्रजं
 येत्वां चेतसि तद्गते क्षणमपि ध्यायन्ति कृत्वा स्थितिम्।
 तेषां वेष्टमसु विभ्रमाद्हरहः स्फारी भवन्त्याश्चिरं
 माद्यत्कुञ्जरकर्णतालतरलाः स्थैर्यं भजन्ते श्रियः ॥ २० ॥

ये जो (भक्त)
 चञ्चत्- चमकते हुए
 काञ्चन- सोने के
 कुण्डल- बालियों और
 अङ्ग- बाजूबन्दों को
 धराम् धारण किये हुए,
 आवद्ध- पहने हुए
 काञ्ची सोने की
 स्रजं ताण्डी वाले
 त्वां तुम्हारे स्वरूप का
 तद्गते उसी (तुम्हारे स्वरूप
 में) लगे हुए
 चेतसि मन में
 क्षणमपि एक क्षण भी
 स्थितिं कृत्वा एकाग्रता
 पूर्वक
 ध्यायन्ति ध्यान करते
 तेषां उनके (भक्तों)

वेष्टमसु घरों में
 अहरहः सदा
 स्फारी- } विकास में आती हुई
 भवन्त्यः }
 माद्यत्कुञ्जर- महत शब्दों के
 कर्णताल- कन पुटी जैसी
 तरलाः चञ्चल (भी)
 श्रियः प्राप्ति का
 विभ्रमात् विवश होकर
 अचिरं चिरकाल तक
 स्थैर्यं स्थिर रूप से
 स्थैर्यं स्थिरता को
 भजन्ते सेवन करती हैं
 (स्थिर रहती हैं)

प्रार्भट्या प्राशिरवण्ड मण्डित जराजूरां नृमुण्डस्रजं
 बन्धूकप्रसवारणाम्बरधरां प्रेतासनाध्यासिनीम्।
 त्वां ध्यायन्ति चतुर्भुजां त्रिनयनामापीनतुङ्ग-हस्तनीं
 मध्ये निम्नवलित्रयाङ्कितं तनुं त्वद्रूपसंवित्तये ॥ १२ ॥

प्रार्भट्या-	वीरवृत्तिसे	मध्ये-	मध्यभागमें
प्राशिरवण्ड-	चंद्रकलासे	निम्न-	सूक्ष्म (गहरा)
मण्डित -	सुशोभित	वलित्रय-	तीन चक्रों के
जराजूरां	जराजूर वाली,	अंकित -	चिह्न वाले
नृमुण्ड	मनुष्य की खोपड़ी	तनुं	स्वरूप वाली को
स्रजं	की मालाधारी,	त्वां	तुम्हें
बन्धूकप्रसव-	अ बन्धूकपुष्प जैसे	त्वत्-	तुम्हारे
प्ररुण -	लाल	रूप -	स्वरूप के
अम्बरधरां	वस्त्र धारण किये	इ संवित्तये	जानने के लिये
प्रेतासन	हुए प्रेत रूप आसन (प्रेत-प्रणीत स्थूल, सूक्ष्म, अणु)	ध्यायन्ति	विमर्श करते हैं
प्रध्यासिनीं	पर बैठने वाली		शरीरों से प्रतीत, देहाभिमान को दबाये हुए
चतुर्भुजां	चार बाजूओं वाली		
त्रिनयनां	तीन नेत्रों वाली (सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि)		
आपीन-	बड़े		
तुङ्ग-	मोटे		
हस्तनीं	हस्तों वाली		

माला की भांति जगत को प्राध्यायन और प्राप्तावम
 देने वाली

जातेऽप्यल्पपरिच्छदे द्वातिभुजां सामान्यमात्रे कुले
निःशेषावनिचक्रवर्तिपदवीं लब्ध्वा प्रतापोन्नतः।
यद्विद्याधरवृन्दवन्दितपदः श्रीवत्सराजोऽभवत्
देवि! त्वच्चरणाम्बुजप्रणतिजः सोऽयं प्रसादोदयः॥ १२॥

देवि! हे देवि!

द्वातिभुजां राजाश्रीं
(द्वानियों) के

सामान्यमात्रे अति साधारण
कुले कुलमें (और)

{ अल्प - छोटे
परिच्छदे वंशमें
जातः अपि उत्पन्न हुआ
भी

{ निःशेषः सारी
अवनि - पृथिवी के
चक्रवर्ति - चक्रवर्ती
पदवीं पदवी को

लब्ध्वा पा कर
प्रताप+उन्नतः ऊंचे प्रताप
वाला

{ विद्याधर - विद्याधरों के
वृन्द - समूहों से
वन्दित - प्रसन्न गये हुए पूजे हुए
पदः चरणों वाला

यत् श्रीवत्सराजः श्रीवत्सराज
अभवत् था, (उसको)

{ सो वह
अयं यह (सब कुछ)
प्रसाद अर्थः अनुग्रह का उदय

{ त्वत् - तुम्हारे
चरण - चरण
अम्बुज - कमलों के
प्रणतिजः प्रणाम से उत्पन्न
हुआ है या

चंडि! त्वच्चरणाम्बुजार्चनविधौ बिल्वीदलोल्लुण्ठन -
 त्रुट्यत्कण्ठककोटिभिः परिचयं येषां न जग्मुः कराः। जग्मुः
 ते दण्डाङ्कुशचक्रचापकुलिशश्रीवत्समत्स्याङ्कितैः
 जायन्ते पृथिवीभुजः कथमिवाम्भोजप्रभैः पारिणमिः॥२३॥

चंडि!	हे चण्डी,	ते	वह (अभक्त)
त्वत् -	तुम्हारे	(२) दण्ड -	दंड
चरणा -	चरणा	अंकुश -	आंकुश (ऐंग कश्मीरी)
अम्बुज -	कमलों की	चक्र -	चक्र
अर्चन -	पूजा की	चाप -	धनुष
विधौ	विधि में	कुलिश -	कुल्हाड़ी
येषां	जिनके (अभक्तों)	श्रीवत्स -	श्रीवत्सरत्न
कराः	हाथ	मत्स्याङ्कितैः	(खौर) मछली के
बिल्वीदल -	बिल्वपत्र के		चिह्नों से युक्त वाले
उल्लुण्ठन -	तोड़ने से	अम्भोजप्रभैः	कमल जैसे
त्रुट्यत् -	चुमते हुए	पारिणमिः	हाथों से युक्त
कंठककोटिभिः	करोड़ों कांटों से	पृथिवीभुजः	चक्रवर्ती राजा
१) परिचयं	अभ्यास को	कथं इव	किस प्रकार
न जग्मुः	प्राप्त नहीं हुए	जायन्ते	बन सकते हैं॥

१) जिन्होंने ने देवी की पूजा के लिये कष्ट सहे, उन को चक्रवर्ती राजा बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, अभक्त ऐसा फल प्राप्त नहीं कर सकते ॥

२) सामुद्रिक शास्त्र की दृष्टि से दण्ड, अंकुश आदि का आकार हाथ पर होना चक्रवर्ती राजा बनने के लक्षण हैं।

विष्णुः क्षीरगन्धर्वो विष्णुस्तदितरे क्षीराज्यमध्वासुवैः
 त्वां देवि! त्रिपुरे! परापरमयी सन्तर्प्य पूजाविधौ।
 यां यां प्रार्थयते मनः स्थिरधियां तेषां त एव ध्रुवं
 तां तां सिद्धिमवाप्नुवन्ति तरसा विद्वैरविष्नी कृताः॥ १४॥

देवि! त्रिपुरे!	हे कीडनशील	यां यां	जिस जिस
	त्रिपुरा देवी!	सिद्धि	सिद्धि की
विष्णुः	ब्राह्मण,	प्रार्थयते	प्रार्थना करता है
क्षीरगन्धर्वो	क्षत्रिय,	तां तां	उस उस (सिद्धि को)
विष्णुः	वैश्य,	ते एव	वही (भक्त)
तत्तदितरे	और इनसे प्रतिरिक्त	ध्रुवं एव	निश्चय करके ही
	(जीवसुखपुरुष)	विद्वैः	सब विद्वानों से
क्षीर-	दूध,	अविष्नी कृताः	निर्विघ्न बने हुए होकर
प्राज्य-	क्षी,	तरसा	शीघ्र ही
मधु -	शहद (शुगर)	प्राप्नुवन्ति	प्राप्त करते हैं॥
प्राप्तवैः	किर सस		
त्वां	तुम्हें		
परापरमयी	स्थूल और		
	सूक्ष्म रूप देवी को		
पूजाविधौ	पूजा की विधि में		
सन्तर्प्य	(तुम्हें को) तृप्त करके		
तेषां	उन		
स्थिरधियां	स्थिर बुद्धि वालों का		
मनः	मन		

शब्दानां जननी त्वमत्र भुवने वाग्वादिनीत्युच्यते
 त्वत्तः केशववासवप्रभृतयोऽप्याविर्भवन्ति स्फुटम्।
 लीयन्ते खलु यत्र कल्पविरमे ब्रह्मादयस्तेऽप्यमी
 साह त्वं काचिदचिन्त्यरूपमहिमा शक्तिः परा गीयसे॥१५॥

त्वं	तुम	यत्र	जिसमें (तुम्हारे स्वरूप में)
प्रत्र	इस	खलु	निश्चय करके
भुवने	जगत् में	लीयन्ते	लय हो जाते हैं,
शब्दानां	सभी शब्दों की	सा त्वं	वही (तुम)
जननी	उत्पन्न करने वाली	काचित्	कोई (अलौकिक)
१) वाग्वादिनी	वाणियों की उच्चारण करने वाली	{ अचिन्त्य -	चिन्तन से अतीत
इति	इस नाम से	रूप -	रूप (और)
उच्यते	कहलाती हो,	महिमा -	महिमा वाली
केशव -	विष्णु	परा शक्तिः	परा (उत्कृष्ट) शक्ति
वासव -	इन्द्र	इ त्वं	तुम
प्रभृतयः	इत्यादि	गीयसे	गाई जाती हो॥
अपि	भी		
त्वत्तः	तुमसे ही		
आविर्भवन्ति	प्रकट होते हैं,		
ते प्रमी	वही यह		
२) ब्रह्मादयः	ब्रह्मा, विष्णु		
अपि	आदि		
	भी		
कल्पविरमे	कल्प के अंत में		

- १) चार प्रकार की वाणियां परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैश्वरी हैं, यह सब परा शक्तिका ही प्रसर है और इसी से सारी सृष्टि, स्थूल सूक्ष्म, सूक्ष्म सृष्टि की उत्पत्ति है।
 २) ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र जो सृष्टि, स्थिति और संसार के अधिकारी हैं, इ शक्ति से ही निकलते हैं और उसी में लय हो जाते हैं॥

देवानां त्रितयं त्रयी हुतभुजां शक्तित्रयं त्रिस्वरा -
 त्रैलोक्यं त्रिपदी त्रिपुष्करमयो त्रिब्रह्मवर्णास्त्रयः।
 यत्किञ्चिज्जगति त्रिधा नियमितं वस्तु त्रिवर्गात्मकं
 तत्सर्वं त्रिपुरेति नाम भगवत्यन्वेति ते सर्वतः॥ २६॥

भगवति! हे भगवती,
 देवानां त्रितयं तीन देवता
 (ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र)
 हुतभुजां त्रयी तीन अग्नि
 (ब्रह्माग्नि, इन्द्राग्नि, शमशान)
 शक्ति त्रयं तीन शक्तियां
 (इच्छा, ज्ञान, क्रिया)
 त्रिस्वराः तीन स्वर
 (अ, इ, उ)
 त्रैलोक्यं (उदात्त, अनुदात्त, स्वरित)
 त्रैलोक्यं { तीन लोक
 भूः, भुवः, स्वः
 परा, परापरा, अपरा }
 त्रिपदी, तीन पद
 (गायत्री, जालंधर, कामरूप)
 त्रिपुष्करम् तीन जल
 (नाभि, हृदय, ललाट)
 त्रयः त्रयः
 त्रिब्रह्म तीन ब्रह्म
 (नर, शक्ति, शिव)
 (इडा, पिंगला, सुषुम्णा)
 त्रयः वर्णाः तीन वर्ण
 (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य)

जगति जगत् में
 यत् जो
 किञ्चित् कोई कुछ भी
 वस्तु पदार्थ
 त्रिधा तीन प्रकार से
 नियमितं नियम में बांधा गया है
 त्रिवर्गात्मकं या तीन वर्गों के रूप है
 तत्सर्वं वह सब ही
 तत्सर्वतः वास्तवता से
 ते तुम्हारे
 त्रिपुरेति 'त्रिपुरा' इस तरह ऐसे
 नाम नाम से का
 अन्वेति अनुसरण करते हैं

लक्ष्मी राजकुले जयां रणभुवि हेमङ्करी मध्वनि
 कल्यादद्विपसर्पभाजि श्वरी कान्तार दुर्गे गिरौ।
 भूतप्रेतपिशाचजम्बुक भये स्मृत्वा महाभैरवी
 व्यामोहे त्रिपुरां तरंति विषदः तारां च तोयप्लवे॥२७॥

राजकुले	राजकुलमें	महाभैरवी	महाभैरवी रूपका,
लक्ष्मी	लक्ष्मी का,	व्यामोहे	बड़े भय में
रणभुवि	युद्ध क्षेत्र में	त्रिपुरां	त्रिपुरा रूपका,
जयां	जया रूपका,	{ तोय	जलके
प्रध्वनि	मार्ग में	{ प्लवे	बाड़ में
हेमङ्करीम्	कल्याणकारिणी का	तारां	तारा रूपका (तुम्हारा)
{ कल्याद -	शेर	स्मृत्वा	(तारने वाली),
{ द्विप -	हाथी	स्मृत्वा	स्मृत्वा करके है
{ संघों			(भक्त)
{ सर्पभाजि	साँपों से भरे	विषदः	प्रापदश्यों को
प्रध्वनि	मार्ग में	तरंति	पार करते हैं
हेमङ्करीम्	कल्याणकारिणी का,		(प्रापदश्यों से छुटकारा
कान्तार -	कठिन		पाते हैं)
दुर्गे	दुर्गम		
गिरौ	पर्वत पर		
श्वरी	श्वरी रूपका,		
भूतप्रेत -	भूतप्रेत		
{ पिशाच -	पिशाच (खौर)		
{ जम्बुक -	गीदड़ इत्यादि के		
भये	भय में		

माया कुण्डलिनी क्रिया मधुमती काली कला मालिनी
 मातङ्गी विजया जया भगवती देवी शिवा शाम्भवी।
 शक्तिः शुद्धर वल्लभा त्रितयना वाग्वादिनी भैरवी
 ह्रींकारी त्रिपुरा पशुपतमयी माता कुमारी त्र्यम्बिका ॥ १८ ॥

माया	स्वातन्त्र्यशक्ति	शुक्लवल्लभा	शुंकर की प्रिया
कुण्डलिनी	मूलाधारशक्ति	त्रितयना	सूर्य, चंद्र, अश्विनी रूप
क्रिया	क्रिया शक्ति		तीन नेत्रों वाली
मधुमती	अनन्दशक्ति	वाग्वादिनी	पशु, प्रादिकाणी रूप
काली	सृष्टि शक्ति	भैरवी	विमर्शमय
	संहार शक्ति		भैरव की शक्ति
कला	अमृतमय	(भरणा, खन, वसन करने वाली)	
	अमा कला	ह्रींकारी	ह्रींकार रूप (माया बीज)
मालिनी	प्रादि दान्त	त्रिपुरा	इडा, पिंगला, सुषुम्णा रूप
	वर्णमाला शक्ति	पशुपतमयी	स्थूल सूक्ष्म रूप
मातङ्गी	मत्तंग उरुषि की	माता	जगज्जननी
	कन्या	कुमारी	भेद को नष्ट करने वाली
विजया जया	जयविजयरूप	इति	इन इन नामों से
भगवती	सर्व ऐश्वर्यमयी	असि	तुम ही हो ॥
देवी	कीडन प्रीति		
शिवा	कल्याण रूप		
शाम्भवी	शंभु की अभिन्न		
शक्तिः	शक्ति		

अष्टपल्लवितैः परस्परयुतैः द्वित्रिक्रमाद्यक्षरैः
 काद्यैः दान्तगतैः स्वरदिभिरथ दान्तैश्च लैः सस्वरैः।
 नामानि त्रिपरे! भवन्ति खलु यान्यत्यन्तगुह्यानि ते
 तेभ्यो भैरवपति! विंशतिसहस्रेभ्यः परेभ्यो नमः ॥ २८ ॥

त्रिपुरे! हे त्रिपुरादेवी
 अष्टपल्लवितैः आठ और 'इ' से लेकर
 परस्परयुतैः प्रसर में आए हुए
 काद्यैः मिले हुए
 दान्तगतैः क से लेकर
 द्वित्रि - दो तीन, चार आदि के
 क्रमाद्यक्षरैः क्रम से के अक्षरों से
 स्वरदिभिः आदि में स्वर रखकर
 अथ फिर
 दान्तैः च जो जिनके अन्त में हैं
 लैः अथवा जो उनके पीछे हैं
 सस्वरैः उन (क से तक)
 यानि स्वरों सहित (प्रक्षरों से)
 अत्यन्त जो
 गुह्यानि बहुत ही
 नामानि रहस्य
 ते नाम
 तुम्हारे

खलु निश्चय करके
 भवन्ति बनते हैं
 भैरवपति! हे भैरव की प्राप्ति
 तेभ्यः हे भैरव की प्राप्ति
 विंशतिसहस्रेभ्यः उन सब नामों को
 परेभ्यः बीस हजार
 नमः से भी
 अधिक (नामों को)
 नमस्कार हो ॥

बौद्ध्या निपुणं बुधैस्तुतिरियं कृत्वा मनस्तद्धतं
भारत्याः त्रिपुरेत्यनन्यमनसा यत्रायवृत्तिस्फुरम्।
एकद्वित्रिपदक्रमेण कथितस्त्वत्पादसंख्याद्यैः
मन्त्रोद्धारविधिर्विशेषसहितः सत्सम्प्रदायान्वितः॥ २०॥

इयं यह

भारत्याः भगवती की
(सरस्वती)

स्तुतिः स्तुति

बुधैः ज्ञानवानों को

निपुणं तीक्ष्ण

मनः मन को

{ तद्धतं उसी (देवी में)

{ कृत्वा एकाग्र करके

{ अनन्य न किसी दूसरे में

{ मनसा लगाये हुए मन से

त्रिपुरा इति त्रिपुरा देवी ही

सब का कारणादृष्ट

इस प्रकार

बौद्ध्या जाननी चाहिए,

यत्र जिस स्तुति में

प्रायवृत्ते पहिले ही प्रलोक में

एकद्वित्रि- एक दो या तीन

पौर

पदक्रमेण

४ त्वत्पाद

पाद

संख्याद्यैः

विशेषसहितः

सत्सम्प्रदाय-

पदों के क्रम से

तुम्हारे तुम्हारे (प्रलोक) के

पादों के गिनती के अक्षरों से

विशेषता के सहित

परमार्थ सम्प्रदाय

या गुरु क्रम के से

अन्वितः

युक्त

मन्त्रोद्धार -

मन्त्र के निकालने का

विधिः

ढंग

स्फुरम्

प्रकट रूप से

कथितः

कहा है॥

सावद्यं निरवद्यमस्तु यदि वा किं वानया चिन्तया
 नूनं हस्तोत्रमिदं पठिष्यति नरो यस्यास्ति भक्तिस्तवायि।
 संचिंतयापि लघुत्वमात्मानि दृष्टं संजायमानं हृष्टात्
 त्वद्भक्त्या मुखरी कृतेन रचितं यस्मान्मयापि ध्रु स्फुटम्॥ २१॥

प्रनया	इस	यस्मात्	जिस कारण (क्योंकि)
चिन्तया	चिन्ता से	मया अपि	मैं ने भी
किं ?	क्या ? (लाभ है)	त्वत् भक्त्या	तुम्हारी भक्ति से
सावद्यं (चाहे)	दोष सहित	(१) मुखरी कृतेन	वाचाल बने हुए
यदि वा	या	मया अपि	मैं ने भी
निरवद्यं	दोष रहित	प्रात्मनि	प्रपने आप में
प्रस्तु	(यह स्तुति) हो,	ध्रुवं	निश्चय करके
यस्य	जिस पुरुष की	दृष्टं	दृढ़ता से
त्वयि	तुम में	संजायमानं	उत्पन्न हुए
भक्तिः	भक्ति	(२) लघुत्वं	प्रत्यभाव को
प्रहित	है	संचिंत्य	विचार करके (विमर्श करके)
(स) नरः	वह मनुष्य	अपि	भी
इदं हस्तोत्रं	इस हस्तोत्र को	हृष्टात्	हठ से
नूनं	प्रवर्ष्य	स्फुटं (और)	स्फुट भाव से
पठिष्यति	पढ़ेगा, (विमर्श करेगा)	रचितम्	(हस्तोत्र की) रचना की॥

(१) वाचाल अर्थात् तीक्ष्ण विमर्श युक्त
 (२) दूस्स हल्कापन अर्थात् शरीर प्राण इत्यादि को अभिमान छोड़कर

प्रानन्दसुन्दरपुरन्दरमुक्तमाल्यं
 मौलौ हठेन निहितं महिषासुरस्य।
 पादाम्बुजं भवतु मे विजयाय मञ्जु-
 मञ्जीरशिञ्जितमनोहरमम्बिकायाः॥ २॥

प्रानन्द-	प्रानन्द देने के	मे	मी
सुन्दर	कारण	विजयाय	विजय के लिये
पुरन्दर-	सुन्दर (और)	भवतु	हो
मुक्तमाल्यं	इन्द्र से (डाली हुई)	प्रार्थना	प्रार्थना
महिषासुरस्य	मोतियों की माला	यह है कि देवी के शरणा	यह है कि देवी के शरणा
मौलौ	वाला,	प्राने से मुझे हर प्रकार	प्राने से मुझे हर प्रकार
हठेन	महिषासुर नाम	की विजय (भोग तथा मोक्ष)	की विजय (भोग तथा मोक्ष)
निहितं	सम्बल राक्षस के	प्राप्त हो॥	प्राप्त हो॥
मञ्जु-	सिंह पर		
मञ्जीर-	जोर से		
शिञ्जित-	रत्न हुआ, (तथा)		
मनोहरम्	सुन्दर		
प्राम्बिकायाः	पायलों की (स)		
पादाम्बुजं	मंकार से		
	मन को मोहित		
	करने वाला		
	जगत की माता		
	का		
	चरणा कमल		

सौन्दर्यविभ्रमभुवो भुवनाधिपत्य-
 सम्पत्तिकल्पतरुसिन्धुपुरे! जयन्ति।
 एते कवित्वकुमुदप्रकरवबोध-
 पूर्णैन्दवस्तवयि जगज्जननि! प्रणामाः॥२॥

त्रिपुरे!	हे त्रिपुरा,	त्वयि	तुम्हें किए हुए (बार बार)
जगज्जननि!	हे जगत् की माता,	एते	यह
८) { सौन्दर्य -	सुन्दरता के	प्रणामाः	ब प्रणाम
{ विभ्रम -	विकास की	जयन्ति	विजय प्राप्ती हैं॥
{ भुवो	भूमियां,		
{ भुवना +	तीनों भुवनों के		
{ अधिपत्य -	स्वामीभाव रूप		
{ संपत्ति -	सम्पदा के पाने के लिए		
कल्पतरुः	कल्पवृक्ष के समान,		
{ कवित्व -	सर्वज्ञता रूप		
{ कुमुद -	कुमुद पुष्पों के		
{ प्रकर -	समूह को		
{ अवबोध -	विकासित करने (खिलाने) के लिये		
{ पूर्णैन्दवः	परिपूर्ण चन्द्रमा जैसे		

देवी को बार बार प्रणाम करने से तीनों भुवनों का स्वामीभाव, सर्वज्ञता इत्यादि की प्राप्ति होती है।
 सर्वज्ञता से शेष सभी शक्तियां सर्वकर्ताभाव, पूर्णता, व्यापकता और नित्यता सम्पन्न लेनी चाहिए॥

८) सुन्दरता - चित्त आनन्द स्वरूप

देवि! स्तुतिव्यतिकरे कृतबुद्धयस्ते
वाचस्पतिप्रभृतयोऽपि जडीभवन्ति।
तस्मान्निसर्गजडिमा कतमोऽहमत्र
स्तोत्रं तव त्रिपुरतापनपति! कर्तुम्॥३॥

देवि!	हे देवी,	अत्र	इस संसार में
ते	तुम्हारी	तव	तुम्हारी
{ स्तुति-	स्तुति करने के	स्तोत्रं	स्तुति
{ व्यतिकरे	उद्योग में	कर्तुं	करने के लिये
कृतबुद्धयः	तीक्ष्ण बुद्धि	{ निसर्ग-	स्वाभाविक
	वाले	{ जडिमा	मन्दबुद्धि
{ वाचस्पति-	बृहस्पति	अहं	मैं
{ प्रभृतयः	इत्यादि (देवर्षी)	कतमः	किस गिनती में हूँ?
अपि	भी		
जडी	असमर्थ		
भवन्ति	हो जाते हैं,		
तस्मात्	इस कारण		
{ त्रिपुर-	हे त्रिपुरासुर को		
{ तापन-	मारने वाले		
	(शिव) की		
{ पतिन!	अभिन्न शक्ति!		

मातस्तथापि भवतीं भवतीब्रताप-
विच्छिद्ये स्तुतिमहार्णवकर्णधारः।
स्तोतुं भवानि! स भवचरणाविन्द-
भक्तिग्रहः किमपि मां मुखरी करोति ॥ ४ ॥

मातः!	हे माता!	भवतीं	प्राप की
तथापि	फिर भी	स्तोतुं	स्तुति करने के
भव-	संसार के		लिए
तीव्र-	तीव्र	मां	मुझे
ताप-	संताप के	भवानि!	हे भवानी!
विच्छिद्ये	नाश करने	किमपि	कुछ कुछ
	के लिए	मुखरी	वाचाल
स	वह	करोति	बनाता है॥
स्तुति-	स्तुतिरूप	(भक्ति के कारण मेरा	
महार्णव-	बड़े सागर को	उत्साह बढ़ता है)	
	(पार करने के लिए)		
कर्णधारः	मल्लाह रूप		
भवत्-	प्राप के		
चरणाविन्द-	चरणकमलों		
	की		
भक्तिग्रहः	भक्ति का हठ		

सूते जगन्ति भवती भवती बिभर्ति
जागर्ति तत्त्वय कृते भवती भवामि!
मोहं भिनत्ति भवती भवती रुणद्धि
लीलायितं जयति चित्रमिदं भवत्याः॥५॥

भवामि!	हे भवानी,	इदं	यह
भवती	प्राप ही	चित्रं	आश्चर्यमय
जगन्ति	जगती की	भवत्याः	प्राप की
सूते	सृष्टि करती हो,	लीलायितं	की डा
भवती	प्राप ही	जयति	विजय प्राप्ती ॥५॥
(जगन्ति)	(जगती को)		
बिभर्ति	धारण करती हो,		
	(स्थिति)		
भवती	प्राप ही		
तत्त्वय कृते	उस जगत् के		
	नाश करने के लिए		
जागर्ति	जगती रहती हो,		
भवती	प्राप ही		
मोहं	मोह को		
भिनत्ति	नाश करती हो,		
भवती	प्राप ही		
रुणद्धि	स्वरूप का		
	गोपन करती हो,		

यस्मिन्मनागपि नवाम्बुजपत्रगौरि!
 गौरि प्रसादमधुरं दृशमादधासि।
 तस्मिन्निरन्तरमनङ्गप्रारवकीर्ण -
 सीमन्तिनीनयनसन्ततयः पतन्ति॥ ६॥

नव -	(हे) नये	पतन्ति पड़ती हैं॥
अम्बुज -	खिले हुए कमल के	अर्थात् सुन्दर अणिमादिक
पत्र -	पते जैसी	शक्तियां उसके वश में
गौरि!	गौरी! (निर्मल)	हो जाती हैं॥
यस्मिन्	जिस भक्त पर	
मनाक् अपि	छोड़ी भी	
प्रसाद -	अनुग्रह के कारण	
मधुरं	आनन्ददायक	
दृशं	दृष्टि	
आदधासि	डालती हो,	
तस्मिन्	उस भाँ भक्त पर	
(हे) गौरि!	हे पार्वती!	
अनङ्ग -	कामदेव के	
प्रार -	बाणों के कारण	
प्रवकीर्ण -	चंचल बनी हुई	
सीमन्तिनी -		
नयन -	दृष्टियों की	
सन्ततयः	शक्तियां	
निरन्तर	लगातार	

पृथ्वीभुजोऽप्युदयनप्रवरस्य तस्य
 विद्याधरप्रणतिचुम्बितपादवीठः।
 यच्चक्रवर्तिपदवीप्रणयः स एष
 त्वत्पादपङ्कजः कणजः प्रसादः॥७॥

तस्य	उस	स	वह (प्राप्ति)
उदयन-}	उदयनप्रवर	एष	इस
प्रवरस्य}	नामवाले	प्रसादः	तुम्हारे
पृथ्वीभुजः	सम्राट् को	त्वत्-	चरण
अपि	भी	पाद -	कमलों की
यत्	जो	पङ्कज -	धूलि के
विद्याधर -	विद्याधरों के	रजः	करों से उत्पन्न
प्रणति -	प्रणामों से	कणजः	हुआ
चुम्बित -	चूमे हुए	प्रसादः	प्रसाद-प्रनुग्रह है
पादवीठः	चरणों के		
	प्राप्तन वाला		
चक्रवर्ति -	चक्रवर्ती राजा		
	की		
पदवी -	पदवी की		
प्रणयः	प्राप्ति (प्रीति)		

त्वत्पादपङ्कजः प्रणिपातपूतैः
 पुण्यैरनल्पमतिभिः कृतिभिः कवीन्दैः।
 क्षीरक्षपाकरदुकूलहिमावदाता
 कैरप्यवापि भुवनत्रितयेऽपि कीर्तिः॥ ८ ॥

त्वत्-	तुम्हारे	क्षीर -	दूध,
पाद -	चरण	क्षपाकर -	चन्द्रमा,
पङ्कज -	कमलों की	दुकूल -	रेशम (झोरा)
धूर्जः	धूलि को	हिम -	बर्फ जैसी
प्रणिपात -	शरण होने से	प्रवदाता	निर्मल
पूतैः	हटे हुए पावों	कीर्तिः	कीर्ति (गुण)
	वाले	प्रवापि	प्राप्त की ॥
पुण्यैः	पवित्र बने हुए अंतः		
अनल्प -	बड़े		
मतिभिः	बुद्धि वाले		
कृतिभिः	क्रियाशाली		
कवीन्दैः	महान् कवियों		
कैरपि	कुछ विरले ही		
	(ऐसे भक्तों ने)		
भुवनत्रितयेऽपि	तीनों भुवनों में भी		

कल्पद्रुमप्रसवकल्पितचित्रपूजा -
मुद्दीपितप्रियतमामदरक्तगीतिम्।
नित्यं भवानि! भवतीमुपवीणयन्ति
विद्याधराः कनकशैलगुहागृहेषु ॥ ६ ॥

भवानि! हे भवानी,
विद्याधराः विद्याधर (देवता)

गुहागृहेषु गुफा सूची
घरों में
नित्यं निरन्तर

{ कल्पद्रुम - कल्पवृक्ष के
प्रसव - फूलों से
कल्पित - की हुई
चित्रपूजां - आश्रयजनक
पूजा वाली
(तथा)

उपवीणयन्ति
सूक्ष्म वीणा पर
गायन करते हैं ॥

{ उद्दीपित - चमकाये हुए
प्रियतमा - अत्यन्त प्रिय
मदर - महती स्नेह के
रक्त - राग रेभरी हुई
गीतिम् गीतों वाली
भवती - आप को
कनकशैल - सुमेरु पर्वत की

लक्ष्मीवशीकरणाकर्मणि कामिनीता -
 माकर्षणाव्यतिकरेषु च सिद्धमन्त्रः।
 नीरन्ध्रमोहतिमिरच्छिदुरप्रदीपो
 देवि! त्वदङ्घ्रिजनितो जयति प्रसादः॥ २०॥

देवि! हे देवी,	त्वद् - तुम्हारे
{ लक्ष्मी - लक्ष्मी को	{ अङ्घ्रि - चरणों का से उज्जा
{ वशीकरणा - वश करने के	{ जनितो उपजा हुआ
{ कर्मणि कामे में	{ प्रसादः अनुग्रह
(तथा)	{ जयति जयशील है

कामिनीतां - सुन्दर शक्तियों को

{ प्राकर्षण - प्रपन्न और
 खेचने के कर्म
 व्यतिकरेषु उद्योग में
 सिद्धमन्त्रः च न चकने वाले मन्त्र रूप

देवी के चरणों का अनुग्रह
 प्राप्त करने से भोग तथा
 मोह लक्ष्मी अवश्य प्राप्त होती है।
 अलौकिक शक्तियों को वश
 करने में यह प्रचक्रमन्त्र का जैसा
 काम देता है और सांसारिक
 मोह रूपी अन्धे से अन्ध बचने
 के लिये ज्ञान प्रकाश देकर
 दीपक का भी काम देता है॥

{ नीरन्ध्र - बहुत ही घने
 मोह - मोह रूपी
 तिमिर - अन्धे को
 छिदुर - नाश करने के लिये
 प्रदीपो दीपक रूप

देवि! त्वदङ्घ्रि-नखरत्नभुवो मयूखाः
 प्रत्यग्रमौक्तिकरुचो मुदमुद्वहन्ति।
 सेवानतिव्यतिकरे सुरसुन्दरीणां
 सीमन्तसीमि कुसुमस्तवकायितं यैः ॥११॥

देवि!	हे देवी,	सीमन्त -	मांग के
त्वत्-	तुम्हारे	सीमि	स्थान को
अङ्घ्रि -	चरणों के	{ सेवा -	सेवा (प्रभ्यास)
नखरत्न -	नाखुन रूपी	{ नति -	प्रणाम (भक्ति) के
	रत्नों से	{ व्यतिकरे	और समावेश से
भुवो	उत्पन्न हुई	{ कुसुम -	फूलों के
		{ स्तवक -	गुच्छे जैसा (सुन्दर)
		{ प्रायितम्	रचाया है
मयूखाः	किरणें		
{ प्रत्यग्र -	नित्य नवीन		
{ मौक्तिक -	मोतियों की		
{ रुचो -	दीप्ति वाले		
{ मुदम्	हर्ष को		
उद्वहन्ति	धारण करती हैं,		
यैः	जिन (किरणों) ने		
सुरसुन्दरीणां	देवस्त्रियों की		

मूर्ध्नि स्फुरत्तुहिनदीधितिदीप्तिदीप्ति
 मध्ये ललाटमसरायुधरश्मिचित्रम्।
 हृच्चक्रचुम्बिहुतमुक्कणिकानुरूपं
 ज्योतिर्यदेतदिदमम्ब ! तव स्वरूपम् ॥१२॥

अम्ब !	हे माता,	हृच्चक्र-	हृदय चक्र को
मूर्ध्नि	सिर पर	चुम्बि-	स्पर्श करने वाले
स्फुरत्-	चमकते हुए	हुतमुक्-	अग्नि के
{ तुहिन-	शीतल	कणिका-	करा के
{ दीधिति-	किरणों युक्त	अनुरूपं	सर्रा
	अर्थात् चन्द्रमा के	यत्	जो
दीप्ति-	प्रकाश से	एतत्	यह
दीप्ति	चमकता हुआ,	ज्योतिः	प्रकाश है
ललाटं	माथे के	इदम्	यह
मध्ये	बीच में	तव	तुम्हारा ही
असरायुध-	इन्द्रधनुष की	स्वरूपम्	स्वरूप है ॥
रश्मि-	किरणों के समान		
चित्रं	विचित्रता वाला, (रंगा रंग)		

रूपं तव स्फुरितचन्द्रमरीचिगौर-
 प्रालोकते मनसि वागधिदैवतं यः।
 निःसीमसूक्तिरचनामृतनिर्भरस्य
 तस्य प्रसादमधुराः प्रसरन्ति वाचः॥
 १३॥

यः	जो (भक्त)
तव	तुम्हारे
{ स्फुरित-	विकसित (परिपूर्ण)
चन्द्र-	चन्द्रमा की
{ मरीचि-	किरणों जैसे
गौर	श्वेत (कि निर्मल)
वाक -	सभी वाणियों के
अधिदैवतं	अधिष्ठाता रूप
रूपं	स्वरूप को
प्रसरति	सिर में (दृष्टान्त में)
प्रालोकते	देखे (ध्यान से एकाग्र होकर साक्षात्कार करे)
{ निःसीम-	सीमारहित (अनन्त)
सूक्ति-	सुन्दर वाणियों की
रचना-	रचना रूपी -
{ अमृत -	अमृत से
निर्भरस्य	परिपूर्णा
तस्य	उस (भक्त) की
{ प्रसाद -	(तुम्हारे) अनुग्रह से
मधुराः	मीठी (परमार्थ पूर्ण)
वाचः	वाणियाँ
प्रसरन्ति	निकलती हैं॥

सिन्दूरपांसुपटलच्छुरितामिव द्या
 त्वत्तेजसा जतरसस्तपितामिवोर्वीम्।
 यः पश्यति दूरामपि त्रिपुरे! विहाय
 व्रीडां मृडानि! सुदृष्टमनुद्वान्ति॥१४॥

त्रिपुरे! हे त्रिपुर देवि! (तीनों लोकों
 तथा तीनों प्रारों में व्यापिनी)

यः	जो (भक्त)
द्या	प्राकाश को
{ सिन्दूर-	सिन्दूर की
पांसु -	सूक्ष्म धूलिके
{ पटल -	समूह से
छुरितां	रगा हुआ (आच्छादित)
इव	जैसा
उर्वीं	पृथिवी को
{ त्वत् -	तुम्हारे
तेजसा	तेज से
{ जतरस-	रस में
स्तपितां	धुली हुई (उसरस में डूबी हुई)
इव	जैसी
दूरामपि	एक दूरामात्र भी
पश्यति	देखे,
मृडानि!	हे देवी,
सुदृष्टः	सुन्दर नेत्रों वाली
	(उत्तम शक्तियाँ)
व्रीडां	लज्जा को
विहाय	छोड़कर (विवश होकर)
तम्	उस (भक्त) के
अनुद्वान्ति	पीछे दौड़ती हैं
	(उसके वश में हो जाती हैं)

मातर्मुहूर्तेमपि यः स्मरति स्वरूपं
लाक्षासप्तशततनुनिभं भवत्याः।
ध्यायन्त्यनन्यमनसस्तमनङ्गताः
प्रद्युम्नसीमिसुभगत्वगुणं तरुण्यः॥

यो यं चकारिह गगनार्णवरत्नमिन्दु-
र्यो यं सुरसुरगुरुः पुरुषः पुराराः।
यद्दाममर्धमिदमन्धकसूदनस्य
देवि। त्वमेव तदिति प्रतिपादयन्ति॥

१५५॥

१६५॥

मातः! हे माता!
यः जो (भक्त)
लाक्षा- लाख के
स- स मे
प्रसर- निकली हुई
तनु- सूक्ष्म तार के
निभ समान
भवत्याः प्रापका
स्वरूप स्वरूप
मुहूर्त-प्रपि एक क्षण मात्र भी
स्मरति विमर्श करे
सुभगत्व गुणं सुन्दर गुणों वाले
तं उस भक्त का
प्रनेग कामदेव से
तप्ताः पीडित (चंचल)
{ प्रनन्य- एकाग्र
{ मनसः मनवाली (उसी भक्त की
प्रद्युम्न- प्रीति लगाये हुए मनवाली)
{ सीमि कामदेव के
स्थान
तरुण्यः माने उसे कामदेव ही मानकर
ध्यायन्ति उत्तम प्राक्तियां
ध्यान करती हैं॥

देवि! हे देवी,
यो जो
प्रयं यह
गगन- (चित्) प्राकाश रूपी
प्रणव- समुद्र का
रत्नम् रत्न
इन्दुः चन्द्रमा है
यो (प्रौर) जो
सुर- देवताओं
प्रसुर- तथा राक्षसों का
गुरुः गुरु
पुराराः आदि सिद्ध
पुरुषः पुरुष है
यत् (तथा) जो
प्रन्धक कामदेव के
सूदनस्य मारने वाले अर्थात्
वामम् शिव का
अर्ध बायां
तत् आधा (शरीर का) है
त्वमेव यह (सभी कुछ
इति तुम ही हो
प्रतिपादयन्ति इस बात को
सिद्ध करते हैं॥

इच्छानुरूपमनुरूपगुणप्रकर्षं
सङ्क्षिपिणि! त्वमनुसृत्य यदा विमर्षि।
जायेत स त्रिभुवनैकगुरुस्तदानीं
देवः शिवोऽपि भुवनत्रयसूत्रधारः॥ २७॥

रुद्राणि! विद्रुममयीं प्रतिमामि त्वां
येचिन्तयन्त्यरुणकान्तिमनन्यरूपाम्।
तानेत्य पद्मलदृशः प्रसभं भजन्ते
कण्ठावसक्तमृदुबाहुलतास्तरुण्यः॥ २८॥

(हे) सङ्क्षिपिणि! हे आकर्षण कारिणी,
त्वं आप
यदा जब
इच्छा + अनुरूपं स्वतन्त्र इच्छा के अनुसार
अनुरूप- समान
गुण गुणों के
प्रकर्ष उत्कर्ष वाले
अनुसृत्य अनुसरण करके
विमर्षि धारण करती हो
तदानीं तब ही
स वह
देवः (की डन प्रीला) देवता
शिवः अपि शिव भी
{ त्रिभुवन- तीनों भुवनों का
एक - अद्वितीय
गुरुः पिता (तथा)
{ भुवनत्रय- तीनों भुवन रूपी
(नाटक का)
{ सूत्रधारः सूत्रधार
जायेत बनता है

रुद्राणि! हे रुद्र की रोदन, द्वावरा करने
वाली सृष्टि संहार करने वाली शक्ति!
ये जो (भक्त)
त्वां आपको
{ अरुण - लाल (प्रातः काल का सूर्य)
{ कान्तिम् दीप्ति वाली
{ अनन्य - अनुपम
{ रूपाम् रूप वाली
विद्रुममयीं रुद्राक्षमाला धारी
प्रतिमां मूर्ति का
इव जैसा
चिन्तयन्ति विमर्श करते हैं
पद्मलदृशः सुन्दर नेत्रों वाली
कण्ठावसक्त- गले में डाली हुए
मृदु - कोमल
बाहुलताः बाजुओं वाली
तरुण्यः युवतियां
तान् उनके
एतय पास जा कर
प्रसभं हठ के साथ
भजन्ते धारण करती हैं॥

त्वद्रूपमुल्लासितदाडिमपुष्परक्त-
मुद्रावयेनमदनदैवतमहारं यः॥
तंरूपहीनमपि मन्मथनिर्विशेष-
मालोकयन्त्युरुनितम्बभराहतरुण्यः॥
१६॥

ध्यातासि हैमवति! येन हिमांशुरग्नि-
मालामलधुतिरकलमषमानसेन।
तस्याविलम्बमनवधमनल्पकल्प-
मल्पैर्दिनैः सृजसि सुन्दरि! वाग्विलासम्॥
२०१६॥

यः
त्वत्-
रूपं
उल्लासित-
दाडिम-
पुष्प-
रक्तम्
प्रदरं
त्वत् रूपं
मदनदैवतं
उद्भवयेत
तं
रूपहीनम् अपि
मन्मथ-
निर्विशेषं
उरुनितम्बभराः
तरुण्यः
मन्मथनिर्विशेषं
मालोकयन्ते
(सभी शक्तियां उस भक्त के
प्रधान रहती हैं॥
उसी पुरुष को कामदेव मानती
हैं॥

हैमवति! हे हिमालय की पुत्री!
बर्फ जैसी निर्मल!
येन जिस (भक्त) द्वारा
(प्रकलमष- मानसेन निर्मल
मन से (एकाग्रचित्त होकर)
हिमांशु- चन्द्रमा की
रश्मि- किरणों के
माला- समूह जैसी
प्रमल- निर्मल
धुतिः दीप्ति वाली (तुम)
ध्याता ध्यान की गई (विमर्श)
प्रति हो,
सुन्दरि! हे सुन्दर शक्तियों से
प्रोभायमान देवी,
तस्या उस पुरुष का
अविलम्ब तत्क्षण (शीघ्र ही)
अनवध दोष रहित प्रकार से
अनल्पकल्प अनन्त
वाग्- वाणियों का
विलास विकास
प्रल्पैः दिनैः छोड़े ही दिनों में
सृजसि उत्पन्न करती हो॥

आधार मारुत निरोध वशेन येषां
सिन्दूर रञ्जित सरोज गुणानुकारि।
तीव्रं हृदि स्फुरति देवि! वपुस्त्वदीयं
ध्यायन्ति तानिह समीहित सिद्ध साध्याः॥

त्वामैन्दवीमिव कलामनुभाल देश-
मुद्रासिताम्बर तलामवलोकयन्तः।
सद्यो भवन्ति। सुधियः कवयो भवन्ति
त्वं भावनाहित धियां कुलकामधेनुः॥ २१॥

देवि!	हे चित्स्वरूपिणी जगत्	भवाम्नि!	हे शंकर की व्यापक प्राप्ति,
येषां	को चमकाने वाली,	त्वां	तुम्हें
हृदि	जिन भक्तों के	ऐन्दवीम्	चन्द्रमा की
आधार	हृदय में	कलाम् इव	कला जैसी (प्रमा कला के
मारुत	मूलाधार के	अनुभाल -	समान)
निरोध	वायु के	देशम्	माथे की
वशेन	रोकने के (वश करने के)	उद्रासित -	जगह पर
सिन्दूर -	कारण	अम्बर तलाम्	चमकाये हुए
रञ्जित -	सिन्दूर से	अवलोकयन्तः	आकाश (चिदाकाश) वाली के
सरोज -	रंगे हुए		प्रत्यक्ष विमर्श करते
गुण -	कमल के	सुधियः	हुए
अनुकारि	मुझ सूक्ष्म तार	सद्यः	ज्ञानी बुद्धिमान जन
त्वदीयं	जैसा	कवयः	शीघ्र ही
तीव्रं	तुम्हारा	भवन्ति	सर्वत्र
वपुः	दीप्तिमान	त्वं	बन जाते हैं।
स्फुरति	स्व स्वरूप	भावना -	प्राप
तान्	प्रकट हो जाता है	आहित -	अद्रा
३६	उन भक्तों को	धियां	धारणा किए हुए
समीहित -	इस संसार में	कुल -	बुद्धि वालों को
सिद्ध -	चाहे हुए (अभिलषित)	कामधेनुः	सभी
साध्याः	सिद्ध देव (पौर)		कामनाओं की पूरणा
ध्यायन्ति	साध्य देव		करने वाली हो॥
	ध्यान करते हैं।		
	उसी भक्त को प्रपना द्रष्टे देव		
	समझते हैं॥		

त्वां व्यापिनीति सुमना इति कुण्डलीति
 त्वां कामिनीति कमलेति कलावतीति।
 त्वां मालिनीति लालितेत्यपरजितेति
 देवि! स्तुवन्ति विजयेति जयेत्युमेति॥ २३॥

ये चिन्तयन्त्यरुणामण्डलमध्यवर्ति
 रूपं तवाम्बुनवयावकपंकपिङ्गम्।
 तेषां सदैव कुसुमायुधबाणभिन
 वदःस्थला मृगदृशो वप्रागा भवन्ति॥ २४॥

देवि! हे देवी,
 त्वां प्रापको सबमें व्यापक
 व्यापिनी, इस नाम से
 इति सुन्दर प्राणाय वाली
 समना इस प्रकार
 इति कुण्डलिनी प्राप्ति
 कुण्डली इति प्राप को
 त्वां कामिनी इच्छा प्राप्ति
 इति कलाओं युक्त
 कलावती इति संकोच विकास मय
 इति कमला प्राप को
 त्वां मालिनी मालाकार
 इति ऐसे
 ललिता सुन्दर
 प्रपराजिता न किसी से परस्तर हुई
 इति सब पर जय पाने वाली
 विजया जय देने वाली
 इति इन इन नामों से
 जया लोग आपकी स्तुति
 इति करते हैं॥
 स्तुवन्ति

प्रम्बा! हे माला।
 ये जो (भक्त)
 प्ररुण - सूर्य
 मण्डल - मण्डल के
 मध्यवर्ति बीच रहने वाले
 नव नवीन
 यावकपंक पिङ्गम् पिचलाये हुए
 तव तुम्हारे
 रूपं स्वरूप का
 चिन्तयन्ति चिन्तन (विमर्श) करते हैं
 तेषां उनको
 कुसुमायुध - कामदेव के
 बाण - बाणों से
 भिन छलनी बने हुए
 वदःस्थला: छाती वाली (हृदय वाली)
 मृगदृशः सुन्दर नेत्रों वाली
 सदैव (उत्तम प्राक्तियों)
 वप्रागा नित्य ही
 भवन्ति वप्रा हो जाती हैं॥

उत्तम हेमरुचिरे! त्रिपुरे! पुनीहि
 चेतश्चिरन्तनमद्यौघवनं लुनीहि।
 कारागृहे निगडबन्धनपीडितस्य
 त्वत्संस्मृतौ भटिति मे निगडास्त्रुटन्ति॥
 २५ स्त्री

उत्तम - हे आगमे तपाये हुए
 हेम - (निर्मल) सोने के समान
 रुचिरे! दीप्ति वाली,
 त्रिपुरे! हे त्रिपुरा,
 पुनीहि, (मुझ को) पवित्र बना,
 चेतः मेरे मन में स्थित
 चिरन्तनम् अनन्त जन्मों के
 अद्यौघ पापों के घने
 वनं जंगल को
 लुनीहि काटे,
 कारागृहे शरीररूपी जेलखाने में
 निगड - बेड़ियों के
 बन्धन - बन्धनों से
 पीडितस्य पीडित हुए (मुझे)
 त्वत् आपकी
 संस्मृतौ स्मृतिकरते ही (स्वरूप का
 भटिति विमर्ष करते ही)
 निगडाः तटहणात्
 त्रुटन्ति बन्धन
 मैं मुक्त हो जाऊँ॥
 टूट जाते हैं। टूट जाऊँ

शर्वाणि! सर्वजनवन्दितपादपद्मे
 पद्मच्छदछवि विडम्बितनेत्रलादिम!
 निष्पापमूर्तिजनमानसराजहंसि!
 हंसि त्वमापदमने कविधां जनस्य॥ २६

शर्वाणि! हे संहारकारिणी!
 सर्वजन - सब लोगों से
 वन्दित - प्रणाम किये हुए
 पादपद्मे! चरणा कमलों वाली
 पद्मच्छद कमल पत्रों की
 छवि प्रोभा के
 विडम्बित एक समान बने हुए
 नेत्रलादिम! नेत्रों की प्रोभा वाली,
 निष्पापमूर्ति पाप रहित (पवित्र अंतः -
 करसा वाले)
 मूर्ति - जन भक्तों जनों के
 मनमानस मनरूपी मानसरोवर की
 राजहंसि! हे राजहंसि!
 त्वं प्राप
 जनस्य शरणागत भक्तों के
 अनेकविधा हर प्रकार की
 आपद प्रापदाओं को
 हंसि नष्ट करती हो॥

त्वद्रूपैकनिरूपणप्रणयिताबन्धो दृष्टो ह त्वद्वरा -
 ग्रामाकर्णनरागिता श्रवणयो ह त्वत्संस्मृतिश्चेति हि।
 त्वत्पादार्चनचातुरी करयुगे त्वत्कीर्तनं वाचि मे
 कुत्रापि त्वदुपासनव्यसनिता मे देवि! मा प्राम्यतु ॥ २० ॥

देवि!	हे देवी!	मे वाचि	मेरी वाणी में
मे	मेरे	(त्वत् -	तुम्हारा
दृष्टो:	नेत्रों में	कीर्तन	गुणगान (हो)
{ त्वत् -	तुम्हारे	कुत्र -	किसी देखा काल या
रूप -	स्वरूप का		प्रवस्था में
एक -	केवल	अपि	भी
{ निरूपण -	साक्षात्कार करने का	मे	हु मुझे
प्रणयिता -	प्रेमभाव का	त्वत् -	तुम्हारी
बन्धः	लगाव (हो)	उपासन -	उपासना करने का
(मे) श्रवणयो:	(मेरे) कानों में	व्यसनिता	पौक
{ त्वत् -	तुम्हारे	मा	मत
गुण -	गुणों के	प्राम्यतु	कम हो जाय ॥
ग्राम -	समूह के (अनन्त)		
{ प्राकर्णन -	सुनने का		
रागिता	राग (हो)		
(मे) चेतसि	(मेरे) मन में		
त्वत्	तुम्हारा		
संस्मृतिः	बार बार स्मरण (हो)		
(मे) करयुगे	(मेरे) दोनों हाथों में		
{ त्वत् -	तुम्हारे		
पाद -	चरणों की		
प्रार्चन -	पूजा की		
चातुरी	चतुरता (हो)		

उद्दामकाम परमार्थ सरोजषण्ड-
 चण्डद्युति द्युतिमुपासित षट् प्रकारम्।
 मोहद्विपेन्द्र कदतोद्यत बोधसिंह -
 लीलागुहां भगवतीं त्रिपुरां नमामि॥२८॥

१. लक्ष्मीकाम

२. लक्ष्मीकाम

३. उद्दामकाम

४. लक्ष्मीकाम

५. लक्ष्मीकाम

६. लक्ष्मीकाम

उद्दाम-	उत्कृष्ट
काम-	इच्छा के
परमार्थ-	परमार्थरूपी
सरोज-	कमल
षण्ड-	समूह (को विकसित करने) के लिए
चण्डद्युति-	सत्य की जैसी
द्युतिम्	दीप्ति (तेज) वाली
उपासित-	उपासना की हुई
षट् प्रकारम्	छः प्रकार से
	(पंच ज्ञानेन्द्रिय और मन द्वारा)
मोह-	मोह (अज्ञान) रूपी
द्विपेन्द्र-	हाथी के
कदत-	मारने के लिए
उद्यत	तैयार
बोधसिंह	ज्ञानरूपी शेर के
लीलागुहां	क्रीड़ा स्थान
भगवतीं	भगवती
त्रिपुरा	त्रिपुरा को
नमामि	(मैं) प्रणाम करता हूँ॥

गणेशवटुकस्तुता
रतिसहायकामान्विता।

स्मरारिवरविष्टरा
कुसुमबाणबाणैर्युता।

प्रनङ्गकुसुमादिभिः
परिवृता च सिद्धैस्त्रिभिः

कदम्बवनमध्यगा
त्रिपुरसुन्दरी पातु नः॥

गणेश - गणेश (प्राण) और

वटुक - भैरव (अपान) से

स्तुता स्तुति की हुई,

रति - रति (बुद्धि)

सहाय - सहित

कामान्विता (कामदेव (मन) के
संबन्ध (सहित) वाली,

स्मरारि शिव ही

वर उत्तम

विष्टरा प्राप्त वाली,

कुसुमबाण - कामदेव के

बाणैः बाणों

युता युक्त,

(मन की तेज और चंचल

वृत्तियों युक्त)

प्रनङ्ग - कामदेव के

कुसुमादिभिः फूलों इत्यादि से

(मन की वृत्तियों)

च

और

सिद्धैस्त्रिभिः तीन सिद्धों (ब्रह्मा -

विष्णु - महेश) से

परिवृताः परिवारित की हुई,

कदम्बवन - कदम्ब वन में
(माया रूपी भेद में)

मध्यगा बीच गई हुई

त्रिपुरसुन्दरी त्रिपुरसुन्दरी भगवती,

नः हमें

पातु पालना करे

यः स्तोत्रमेतदनुवासरमीश्वरायाः
 श्रेयस्कं पठति वा यदि वा शूरोति।
 तस्येति सत् फलति वक्ष्ये राजभिरीड्यते सौ
 जायेत स प्रियतमो हरिणेक्षणात्मा॥

यः	जो (भक्त)
ईश्वरायाः	भगवती का
एतत्	यह
श्रेयस्कं	कल्याणकारी
स्तोत्रं	स्तोत्र
अनुवासरं	प्रतिदिन (निश्चय)
वा पठति	पढ़े
यदि वा	या यदि
शूरोति	सुने
तस्य	उसके
इति सत्	कांक्षित (मनोरथ)
फलति	सफल हो जाते हैं
प्रसौ	वह
राजभिः	राजाओं से
ईड्यते	पूजा जाता है,
स	(पौर) वह
हरिणेक्षणात्मा	सुन्दर प्राणियों का
प्रियतमो	प्रत्यन्त प्यारा
जायते	बनता है॥

مردت حاج میرزا محمد علی و نسبی

60

و جوت پران ۶۸

60,
- 70

25

4

کے لئے

١٤٤٠

ब्रह्मेन्द्र रुद्र हरि चन्द्र सहस्रार प्रिम -
 स्कन्ध द्विपानन हुताशन वन्दितायै।
 वागीश्वरि! त्रिभुवनेश्वरि! विश्वमात -
 स्तुतं बहिष् कृत संस्थितये नमस्ते॥

वागीश्वरि! हे वाणियों की
 स्वामिनी सर-
 स्वती, परा रूप,
 त्रिभुवन - तीनों भुवनों की
 ईश्वरि! स्वामिनी,
 विश्वमातः जगत् की माता!
 ब्रह्मा - ब्रह्मा,
 इन्द्र - इन्द्र,
 रुद्र - रुद्र -
 हरि - विष्णु -
 चन्द्र - चन्द्रमा,
 सहस्रार प्रिम सूर्य
 स्कन्ध - कुमार
 द्विपानन - गणेश
 हुताशन - अग्नि से
 वन्दितायै पूराम की
 हुई

अन्तर अन्तर (अन्तःकरणों
 बहिष् और बाह्य (बहिष्करणों
 में
 कृत संस्थितये की हुई स्थिति
 वाली
 ते तुम्हें
 नमः नमस्कार हो॥

Repelins

देवि!	हे देवी!	प्रम्ब!	हे माता,
त्वद्	तुम्हारे	मूर्ध्नि	सिर मध्ये पर
प्रक्षिप्त	चरणों के	स्फुरत	चमकते हुए
नखरत्नभुजा	नखरत्न रूपी	लहिनदीधिति -	चन्द्रमा के
मयूखः	रत्नों से उत्पन्न हुई	दीप्ति	- प्रकाश से
प्रत्यग्र -	तथा ताजा	दीप्ति	- चमकता हुआ,
मौक्तिकरुचो	मौक्तियों की दीप्ति	ललाट	- माथे पर के
मुट्म मयूखाः	किरणों	मध्य	- बीच में
उद्धहन्ति	हर्ष को	प्रमरायुध -	इन्द्र धनुष के
मुदम्	धारा करती हैं	रश्मि	- किरणों के समान
उद्धहन्ति	धारा करती हैं	चित्रम्	- विचित्रता वाला,
यैः (मयूखैः) जिन (किरणों ने)		हृच्चक्र	- हृदय चक्र को
सेवानति -	सेवा और नम -	चुम्बि	- स्पर्श करने वाले
व्यतिकरे	स्कार के योग में	हृतमुक्	- अग्नि के
सुरसुन्दरीणां	देवस्त्रियों की	करिणकामुखं	- कण के सदृश
सीमन्तसीमि	सुन्दर मांग	यत	- जो
कुसुमस्तक्का -	पुष्पों के	एतत्	- यह
यितम्	गुच्छ की शोभा	ज्योतिः	- प्रकाश है
	दी है॥	इदम्	- यह
		तव	- तुम्हारा ही
		स्वरूपम्	- स्वरूप है॥

विप्रे! हे विप्रे!
 यः जो भक्त
 यां आकाश को
 सिन्दूर- सिन्दूर की
 पांशु- धूलि के
 पटल- समूह से
 छुरितों रंगा हुआ
 इव जैसा
 उर्वी पृथिवी को
 त्वत्- तुम्हारे
 तेजसा तेज से
 जतुरस-
 स्नापितां उबी हुई
 इव जैसी
 (उर्वीम् पृथिवी को)
 ब बीडों लज्जा को
 विहाय छोड़कर
 पश्यस्व देख रहा है,
 तमम् एक तरा मात्र
 अपि भी
 पश्यति देखे
 मृडानि हे देवि!
 सुदृशः सुन्दर नेत्रों वाली
 तं (उत्तम प्राक्तियों)
 प्रनुद्वान्ति उस भक्त को
 (पीछे दौड़ती हैं
 प्राप्त हो जाती हैं)

यः जो (भक्त)
 तव तुम्हारे
 स्फुरित- विकसित
 चन्द्र- चन्द्रमा के
 मरीचि- किरणों जैसे
 गौर श्वेत (निर्मल)
 वाक्- सभी वाणियों के
 प्रधिदैवतं प्रधिष्ठाता रूप
 रूप स्वरूप को
 शिरसि हृदयान्त में, शिर पर
 प्रालोकते देख रहे (ध्यान से
 साक्षात्कार करे)
 निःसीम - प्रसीम
 साक्ति - सुन्दर वाणियों की
 रचना - रचना रूपी
 प्रमृत - प्रमृत से
 निर्भरस्य परिपूर्ण
 तस्य उस भक्त की
 प्रसाद- (तुम्हारे) अनुग्रह से
 मधुराः मीठी
 वाचः वाणियां
 प्रसरन्ति निकलती हैं ॥

Depicting

मातः	हे माता	यः	जो
यः	जो	अयं	यह
{ लाक्षा	लाख के	{ गगन	आकाश रूप
{ रस	रस से	{ प्रणव	सागर का (उस से निकला हुआ)
{ प्रसर	निकलते हुए	{ रत्न	रत्न रूप
{ तन्तु	तार के	इन्दुः	चन्द्रमा
{ निभं	समान	चकास्ति	चमकता है, तथा
भवत्याः	तुम्हारे	यः	जो
स्वरूपं	स्वरूप का	अयं	यह
मुहूर्तम् अपि	थोड़ी देर के लिए भी	सुर-	देवताओं (और)
स्मरति	स्मरण (ध्यान) करे	प्रसर	रहस्यों का
{ सुभगत्व-	सुन्दर	गुरुः	गुरु (पिता)
{ गुणं	गुण वाले	पुराणः	प्रनादिकाल से सिद्ध
तं	उस का (उस भक्त का)	पुरुषः	पुरुष (चित् शक्ति) है, तथा
{ प्रनन्य-	एकाग्र	यत्	जो
{ मनसः	चित्त किए हुए	{ प्रन्धक	कामदेव के
{ प्रमदुः-	कामदेव से	{ सूदनस्य	मारने वाले (शिव) का
{ तप्ताः	पीड़ित (विवश)	इदम्	यह
{ प्रद्युम्न	कामदेव के स्थान	{ वामम्	बायां
{ सीमि	उसी का ध्यान करती हैं	{ प्रधम्	प्राधा (है)
तरुण्याः	सुन्दर स्त्रियां (उत्तम	देवि!	हे देवी!
ध्यायन्ति	प्रणिमादिक शक्तियां	त्वम् एव	तुम ही
	ध्यान करती हैं	एष तत्	यह सब कुछ हो
	(उसके वश हो जाती हैं)	इति	इस बात को
		प्रतिपादयन्ति	सिद्ध करती हैं॥

Refracted

देवि!	हे देवी (कीड़न शील)	भीमे!	हे भयानक रूप वाली
{ त्र्यम्बक -	(तीन नेत्रों वाले) शिव की	भैरवि!	(दुष्टों के लिए)
{ पत्नि!	पत्नी (अभिन्न शक्ति)	चाण्डि!	भैरव (शिव की शक्ति)
पार्वति!	पार्वती (हिमालय की बेटी)	शर्वरि!	तेजस्वी रूप वाली
सति!	सत्ता वाली (सत् रूप)	कले	शर्व की शक्ति
त्रैलोक्य -	तीनों लोकों की	काल दूये	प्रमा कंला
मातः!	माता,	पूलाति ^(इच्छा, ज्ञान, किया)	काल को नाश करने वाली
शिवे!	कल्याण कारिणी,	प्रणतान्	त्रिशूल धारण करने वाली
शर्वाणि!	शर्व अवतार की शक्ति (संहार कारिणी)	{ त्वत्पाद -	तुम्हारे चरणों में
त्रिपुरे!	त्रिपुरा देवी (तीनों शरीरों में व्यापक)	{ प्रणतान्	प्रणम गए हुए
मृडानि!	शिव की शक्ति	{ प्रनन्य -	एकाग्र
वरदे!	(भोग तथा मोक्ष रूप) वर की देने वाली	{ मनसः	मन वालों
रुद्राणि	रुद्र की शक्ति,	{ पर्या -	चारों ओर से (हर प्रकार
काट्यायनि	हे काट्यायनि	{ आकुलान्	व्याकुल
		नः	हम भक्तों { की }
		पाहि	पालना करे

उन्मत्ता इव

उन्मत्ता इव पागल जैसे

सगृहा इव

{ विष - जहर
व्यासक्त - लगने से
मर्च्छा - मूर्च्छित
इव - जैसे

{ प्राप्त - पाए हुए

{ प्रौढ - तीव्र

{ मदा इव नष्टोवाले जैसे

प्रति बहुत ही (विरकालसे)

विरह प्रत्यन्त प्रेमी के विरह की
पीडा से

ग्रस्ता ग्रस्त जैसे (उसी पीडा

इव में डूबे हुए

~~प्राप्ती इव~~ ~~प्राप्त~~ ~~प्राप्ति~~ जैसे

ये जो भक्त

हि निश्चय ही

पौलराज- हिमालय की

तनया पुत्री (पार्वती) का

(पर्वत के समान न टलने वाले

चितस्वरूप वाली)

ते वे (भक्त)

धन्याः सौभाग्यशाली (हैं)

ध्यायन्ति ध्यान करते हैं

ध्यायन्ति एकाग्र होकर ध्यान करते

ते

धन्याः

एकाग्रतः

त्यक्त

उपाधि

विवृद्ध

राग

मनसः

हे

वामभुवः

ध्यायन्ति

वे (भक्त)

सौभाग्यशाली हैं

समाहितता के कारण

छोड़े हुए

शरीर की व्याधि तथा

बढ़े हुए

स प्रेम भरे

मन वाले

(ऐसे भक्त का)

शिव की प्राक्तिया

(इच्छा-ज्ञान-क्रिया)

ध्यान करती हैं

(उस भक्त को प्राप्त होती हैं)

* एकाग्रता और उत्सुकता के कारण

विवश बने जैसे

देवि का संकृत

देवि!	हे देवी,	यः	जो
यः	जो (भक्त)	त्वां	तुम्हें
त्वां	तुम्हें	प्रचति	पूजता है
सकृत्	एक बार (निरुत्तर हृदय रहित)	सः	वह
एव	ही	सुरगणैः	देवताओं के समूहों से
प्रशामति	प्रणाम करता है	अर्च्यते	पूजा जाता है
तं	उस (भक्त) को	यः	जो
प्राजन्म	जन्म से ही	स्तौति	स्तुति करता है
स्फुरत्-	विकास में आ रहा	स	वह
प्रक्षि-	चरणों के	स्तूयते	स्तुति किया जाता है
पीठ-	पीठ पर	यः	जो
विलुठत्-	लुठकते हुए	त्वां	तुम्हें
कोटीर-	सिर ताज की	ध्यायति	ध्यान करता है
कोरि	कैसे डों (सिरों की)	तं	(एकाग्रचित्त से लीन हो जाता)
छटाः	शोभा वाले	उस का	
क्षोणीभूतः	राजा (चक्रवर्ती)	स्मर-	सर्वस्व स्मरण करने के
नमन्ति	नमस्कार करते हैं	प्रार्ति-	प्रायास से
		विधुर	चंचल बनी हुई
		वामभुवः	करसो प्यारी देवियां
		ध्यायन्ति	ध्यान करती हैं
			(उस के वश हो जाती हैं)

देवि!	हे देवी (कीडन शील)	भीमे!	हे भयानक रूप वाली
(त्र्यम्बक -	(तीन नेत्रों वाले) शिव की	भैरवि!	(दुष्टों के लिए)
पत्नि!	पत्नी (अभिन्न शक्ति)	चाण्ड!	भैरव (शिव की शक्ति)
पार्वति!	पार्वती (हिमालय की बेटी)	शर्वरि!	तेजस्वी रूप वाली
सति!	सत्ता वाली (सत् रूप)	कले	शर्व की शक्ति
त्रैलोक्य -	तीनों लोकों की	कालदाये	प्रमा कंला
मातः!	माता,	(इच्छा, ज्ञान, क्रिया)	काल को नाश करने
शिवे!	कल्याण कारिणी,	शूलिनि	शूल धारण करने वाली
शर्वाणि!	शर्व श्रवतार की शक्ति	(इच्छा)	तुम्हारे चरणों में
	(संहार कारिणी)	{ त्वत्पाद -	शरण गए हुए
		{ प्रणतान्	
त्रिपुरे!	त्रिपुरा देवी (तीनों	{ प्रनन्य -	एकाग्र
	शरीरों में व्यापक)	{ मनसः	मन वालों
मृडानि!	शिव की शक्ति	{ पर्या -	चारों ओर से (हर प्रकार
वरदे!	(भोग तथा मोक्ष रूप)	{ आकुलान्	व्याकुल
	वर की देने वाली	नः	हम भक्तों (की)
रुद्राणि	रुद्र की शक्ति,	पाहि	पालना करो
कात्यायनि	हे कात्यायनि		

उन्मत्ता इव

उन्मत्ता इव पागल जैसे

संग्रहा इव

{ विष - जहर
व्यासक्त - लगने से
मच्छी - मच्छित
इव - जैसे

{ प्राप्त - पाए हुए

{ छोट - तीव्र

{ मटा इव नष्ट होने वाले जैसे

प्रति बहुत ही (विरह काल से)

विरह प्रत्यन्त प्रेमी के विरह की
पीड़ा से

ग्रस्ता ग्रस्त जैसे (उसी पीड़ा

इव में डूबे हुए

~~अपाती इव~~ ~~अज्ञ~~ ~~अज्ञ~~ जैसे

ये जो भक्त

हि निश्चय ही

शैलराज - हिमालय की

तनया पुत्री (पार्वती) का

(पर्वत के समान न रहने वाले

वितरकरूप वाली)

ते वे (भक्त)

धन्याः सौभाग्यशाली (हैं)

ध्यायन्ति ध्यान करते हैं

ध्यायन्ति एकाग्र होकर ध्यान करते हैं

* एकाग्रता और उत्सुकता के कारण

विवश बने जैसे

ते वे (भक्त)

छ धन्याः सौभाग्यशाली हैं

एकाग्रतः समाहितता के कारण

{ त्यक्त छोड़े हुए

{ उपाधि शरीर की व्याधि तथा

{ विवृद्ध बड़े हुए

{ राग का प्रेम भरे

{ मनसः मन वाले

{ हे (ऐसे भक्त का)

वामभुवः शिव की प्राक्तिया

(इच्छा - ज्ञान - क्रिया)

ध्यायन्ति - ध्यान करती हैं

(उस भक्त को प्राप्त होती हैं)

देवि का संकृत

देवि!	हे देवी,	यः	जो
यः	जो (भक्त)	त्वां	तुम्हें
त्वां	तुम्हें	प्रार्थति	पूजता है
संकृत	एक बार (निरन्तर	सः	वह
एव	छेद रहित)	सुरगणैः	देवताओं के समूहों से
प्रणामति	प्रणाम करता है	अर्च्यते	पूजा जाता है
तं	उस (भक्त) को	यः	जो
प्राजन्म	जन्म से ही	स्तौति	स्तुति करता है
स्फुरत्-	विकास में आए हुए	स	वह
प्रद्वि-	चरणों के)	स्तूयते	स्तुति किया जाता है
पीठ -	पीठ पर	यः	जो
विलुठत्-	लुठकते हुए	त्वां	तुम्हें
कोटीर -	सिर ताज की	ध्यायति	ध्यान करता है
कोटि	कसेड़ों (सिरों की)	तं	उस का
छटाः	शोभा वाले	स्मर-	सर्वस्मृति स्मरण करने के
क्षोणीभूतः	राजा (चक्रवर्ती)	प्रार्थि-	प्रायास से
नमन्ति	नमस्कार करते हैं	(विधुर)	चंचल बनी हुई
		वामभुवः	करशेखरी देवियां
		ध्यायन्ति	ध्यान करती हैं
			(उस के वश हो जाती हैं)

ध्यायन्ति यः श्रवणमपि

विपुत्रे! हे देवी,
ये जो
लावण्य - सुन्दरता
यौवन - जवानी
धनैः - धनों से
विप्रयुक्ताः हीन
अपि भी

रक्षताम् अपि थोड़ी देर के लिए भी

दृष्टि हृदि अपने हृदय में
(समाहित होकर)

त्वां तुम्हारा
ध्यायन्ति ध्यान करते हैं

ते वे (भक्त)

पुमांसः पुरुष

ललित - प्रति सुन्दर (प्राप्त
करते योग्य)

प्रायतः बड़ी - (सर्वज्ञता से
लोचनाना नेत्रों वाली (ज्ञान वाली)
(सर्वज्ञता, सर्वकर्तृता, पूर्णत्व,
व्यापकत्व, नित्यत्व) शक्तियों का

चित्तैक - एक मन में रखी शिवार में
लिरिवत - किसी दाकिये हुए

प्रतिमाः मूर्तियों के समान

विस्फुरन्ति प्रकटित रहते हैं

यह सभी शक्तियां ऐसे भक्त को
सुविधा से ही प्राप्त हो जाती हैं।

एतं किं नु दृष्ट्वा

देवि!	हे देवी,	किं	क्या
अस्य	जिस (भक्त) के	अमुं	इस पुरुष को
हृदये	हृदय में	निगलामि	निगल जाऊं
त्वम्	आप	(इस को अपने स्वरूप से अभिन्न	प्रभिन्न
प्रावर्तसे	वास करती हो (अपने	बनाऊं)	
	अनुग्रह का संचार करती हो)	वा	या
तस्य	उस (भक्त) का	किं वा	क्या
एतं	इस पुरुष को (भक्त) को)	अनेन	इस पुरुष के साथ
किं	क्या	एकताम्	एक भाव का
नु	निश्चय ही	प्राप्ये	प्राप्य लूं
दृष्ट्वा	ह नेत्रों द्वारा	इत्थं	इस प्रकार के
पिबामि	पी जायें,	(विकल्प	विकल्पों (विचारों) की
टिकटिकी	बांध कर देखती रहूं	घटना	रचना के
उत	अथवा	(प्रकृतेन	प्रयोजन से
अस्य	इस के	विवशः	बेबस (परलब्ध)
अंगम्	अंग में (शरीर में)	योषिज्जनः	शिव की प्राक्तियां
निजैः	अपने	तत्	वह
अंगैः	अंगों द्वारा	किं	कौनसा कार्य है
विश्रामि	प्रवेश करूं	यत्	जो कार्य
इ	होकर एकता प्राप्त	न	नहीं
करूं		करोते	(वह प्राक्तियां) सिद्ध नहीं
वा	या		करती हैं॥

• युवतियां (जवान स्त्रियां) वह प्राक्तियां जो शिव की अपनी आधार रूप स्वामी मानीं हैं। यह नित्यता के गुरा से परिपूर्ण हैं इस कारण इन का जवान रहना अर्थात् बूढ़ी होकर मर न जाना स्वतः सिद्ध ही है॥

इत्यादि यं व्यापिनि
विश्वव्यापिनि यद्वत्

त्रिलोक जननि! हे तीनों लोकों की माता,
यद्वत् जिस प्रकार

विश्वव्यापिनि जगत् में व्यापि
करने वाले
स्थानों नित्य शिव के विषय में

अनन्याश्रयः दूसरे की आश्रय की
प्रपेक्षा न करने वाला
(स्वतन्त्र)

ईश्वरः 'ईश्वर' (ऐश्वर्यशाली)

इति शब्दः इस प्रकार का शब्द
(प्रयुक्त होता है)
(इसी प्रकार)

शक्तिः 'शक्ति' (शिव का सार)

इति शब्द यह शब्द
त्वयि एव तुम्हारे ही विषय में

तथ्य स्थितिः पारमार्थिक स्थिति
वाला है (सत्य रूप से
प्रयुक्त हो सकता है)

इत्थं सति अपि

यत्

इमाः

दुःखाः

रुजो

त्वत्

भक्तान् अपि

बाधितुं

शक्नुवन्ति

रुषा च

न

क्षणेऽपि

देवि!

तत्

महत्

चित्रम्

इस प्रकार (यह बात)

होने पर भी

जो

यह

तुच्छ

रोग आदिक

तुम्हारे

भक्तों को भी

रुकावट पैदा करने में

समर्थ बनती हैं

और क्रोध से (उन रोगादिकों को)

नष्ट करती हो

हे देवी!

वह (यह बात)

बड़ा ही

आश्चर्य है॥

इन्दोयध्यागता

भवानि!	हे देवी,	वर्षन्ती	बरसाती हुई
ये	जो	{ प्रमृते	प्रमृत
देहिनः	पृथीरधारी (जीव)	{ वर्षन्ती	बरसाती हुई
भवती	आपके स्वरूप का	(ऐसे स्वरूप का)	
{ इन्दोः	चन्द्रमा के	ध्यायन्ति	एकाग्रचित्त होकर
{ मध्यगतां	बीच में स्थित		ध्यान करते हैं
{ मृगाङ्ग -	मृग है चिह्न जिसका अर्थात्	ते	वे (जीव प्रथवा भक्त)
{ सट्प -	चन्द्रमा के	{ निर्मुक्त	छूटे हुए
{ च्छायां	समान (निर्मल)	{ रुजो	रोग वाले } निरोग
मनोहारिणीं	प्रोभा वाली	संसार के जन्म मरण स्वी रोग से मुक्त	
पाण्डु -	मन को हरने वाली,	भवन्ति	हो जाते हैं
{ उत्फुल्ल -	श्वेत रंग के	विपदः	विपत्तियां
{ सरोरुह -	खिले हुए	तान्	उन भक्तों को
{ प्रासनगतां	कमल के	दूतः	दूर
{ हिनग्ध -	प्रासन पर ठहरी हुई,	प्रोज्झन्ति	छोड़ देती हैं
{ प्रदीप -	तेल से भरे	वे प्रापतियों से	छुटकार पाते हैं॥
{ च्छाविम्	झा दिये की		
	दीप्ति वाली		

- (1) प्रमेय रूप चन्द्रमा (वेद्यसमूह) में व्यापक
- (2) मृग, चंचल तथा सुन्दर (स्पन्दरात्मक और आनन्ददायक)
- (3) निर्मल कमल (संकोच विकास स्वभाव, अहंता इन्दुता मय)
- (4) अटल दीप्ति (अप्रविताशी चैतन्य स्वरूप)
- (5) प्रमृत अर्थात् मुक्ति देने वाली

पूर्ण चन्द्रमा के

- | | | |
|---|-----------------|----------------------|
| 1 { पूर्ण + इन्द्रोः पूर्ण चन्द्रमा के | तव | (हरे हरे) |
| { प्राकलेः इव गोल आकार से (बना हुआ) जैसा | वपुः | तुम्हारे |
| 2 { प्रति बहलैः बहुत ही बड़े हुए | ये | स्वस्व का |
| { पीयूष पूरैः प्रमृत के प्रवाहों से | अद्वय दयायान्ति | जो (भक्त) |
| (निर्मित) इव (बना हुआ) जैसा | वित्त + | अज्ञा के साथ |
| 3 { क्षीरब्धेः क्षीर समुद्र के | प्रन्तर + | ध्यान करते हैं |
| { लहरी भरीः तरंगों के समूहों से | नि + हत + | मन के |
| (निर्मित) इव (बना हुआ) जैसा | प्रार्ति | बीच |
| 4 { सुधा | ताप | पूर्ण तथा हटे हुए |
| { प्रमृत की | विपदः | दीनता |
| { पकस्य गारेकै (गाढ़े बने हुए) | ते | दुःख, तथा |
| { पिंडैः (निर्मित) इव गोलों से (बना हुआ) जैसा | सम्पदं | विपाति वाले |
| { प्रालेयैः इव बर्फ से जैसा | बिभ्रति | वे भक्त |
| { निर्मित इव बनो हुए हुआ जैसा | | लौकिक तथा पारमार्थिक |
| | | सम्पत्तियों को |
| | | धारण करते हैं ॥ |

उन भक्तों के मन के दुःख और लेशा दूर हो जाते हैं ॥

- (1) पूर्ण चन्द्रमा जैसा - प्रमृत का आकार, दोनों अभिन्न
- (2) प्रमृत के प्रवाह - चन्द्रमा से निकले हुए - भेद का प्रारम्भ (इच्छा शक्ति)
- (3) तरंगों का समूह - भेद प्रकट (ज्ञान शक्ति का स्फुर)
- (4) बर्फ के गोले - प्रमृत प्रकट, विद्रूप का संकोच और जगत् प्रत्यन्त भेद मय (क्रिया शक्ति का स्फुर)

ये संस्मरन्ति वरलां

ये जो (भक्त)
तरलां चंचल रूप वाली
(संकोच विकास मय)

सहसा इच्छामात्र से ही
उल्लसन्ती विकसित रूप वाली
+ ग्रंथि पंचक पांच गांठ मूलावा
+ मिदं प्रावरणों को
हराने वाली
(तरुण छोटे (प्रातः काल के)
+ प्रक सूर्य जैसे
शोरां रक्त वर्ण (लाल रंग)
वाली

त्वां तुम्हें
कृष्ण सारे
जगत् जगत् को
बहल रागिनि राग तत्त्व से भरे
राग + शर्णवे रागरूपी सागर में
मज्जयन्ती डुबाते हुए
तुम्हारे स्वरूप का
+ संस्मरन्ति बार बार स्मरण
से विमर्ष करते हैं

+ पांच ग्रंथियां + चैतन्य स्वरूप को छिपाने वाली पांच
शक्तियां - कला, विद्या, राग, काल, नियति॥

+ ज्ञान शक्ति रूप, प्रातः काल का सूर्य प्रातः उषण न होने के कारण
सुखदायक

मृगादयः मृग जैसी सुन्दर
नयनों वाली + चंचल
दायक + इच्छा से प्राप्त
करने योग्य दिव्य शक्तियां
तान् उन भक्तों को
चेतासि प्रपने मन में
दधाति धारण करती है
उस भक्त पर मोहित होकर उसके
वश हो जाती है॥

लाक्षारस स्नपित पंकज

स्तुमस्वा वाचमयकां

भवानि! हे देवी!
यः जो भक्त
भवतीं आप को
लाक्षारस लाख के रस में
स्नपित धुलै हुई हुए
पंकज कमल के
तन्तु तन्वीं सूक्ष्म तार जैसे
(स्वरूपका)
अन्तः सुषुम्ना धाम में
अनुदिन प्रतिदिन (निरन्तर)
स्मरति स्मरण करता है
तं उस
(स्मरन्) कामदेव के
प्रतिमम् समान (भक्त को)
(प्रप्रतिम- निरूपम (उपमा रहित)
स्वरूपाः स्वरूप वाली
मृगदृशः सुन्दर (प्राप्त करने योग्य
शक्तियां)
नेत्र + उत्पलैः नेत्र कमलों से
भृशम् बहुत ही
प्रचयन्ति पूजती हैं

तवां तुम्हें
हिम- बर्फ
कुन्द- कुन्द पुष्प (घोंस)
इन्दु चन्द्रमा की जैसी
रेचिषम् तेज वाली
आपादतल- चरणों के तले तक
लम्बिनीम् लटकती हुई
कदम्ब कदम्ब पुष्पों की
मालां माला की
विभ्राणाम् धारण करने वाली
अव्यक्तां प्रप्रकट } पर रूप
वाचम् वाणी
स्तुमः (हम भक्त) स्तुति
करते हैं।
* हिम - बर्फ का एक ही छेद रहित निर्मल
तरुता - पश्यन्ती वाणी
कुन्द पुष्प - संकुचित घोंस एक दूसरे से भिन्न,
(मध्यमा वाणी)
इन्दु - चन्द्रमा - वेद्य समूह (वैश्वरी वाणी)

सूत्रांशो सित यज्ञा

दवातीष्टान्धोगान

स्मर+प्ररि+दयिते! हे शंकर की शक्ति!
 मूर्ध्नि ^{पार्वती} सिर पर
 इन्दोः चन्द्रमा को
 { सित - खेत (निर्मल)
 पङ्कज - कमल के
 { प्रासन गतां - प्रासन पर स्थित
 { पालेय - ८ बर्फ जैसी
 पाण्डु - सफेद चमकीली
 { तिवर्ष - दीप्ति वाले
 प्रमृत वर्षन्ती प्रमृत बरसाने वाली
 वक्त्रेऽपि मूलाधार पर
 रन्ध्रेऽपि ब्रह्म रन्ध्र पर
 त्वाम् एव तुम्हें ही (तुम्हारे स्वरूप का)
 स्मरता स्मरना करने वालों को
 प्राच्छिन्ना छेद रहित (निरन्तर
 मनोहरा च तथा मन को हरने वाली
 ललिता च तथा सुन्दर
 प्रति प्रसन्ना ^{और} बहत् ही निर्मल भी
 अपि च ^{और} भी
 वाक् वाणी
 सर्वतो सब ओर से
 वल्गाति प्रकट विकास में
 प्राती है॥

सकृत् एक ही बार (निरन्तर
 ध्याता प्रवाह रूप)
 देवी ध्यान की हुई
 इष्टान् देवी
 भोगान् चाहे हुए
 ददाति भोगों को
 रिपून् देती है,
 क्षपयति शत्रुओं को
 विपदः नाश करती है,
 हन्ति प्रापतियों को
 प्राधीन् हटाती है,
 दहति मन के रोगों का
 व्याधीन् जलाती (नष्ट करती) है,
 शामयति शरीर के रोगों को
 सुखानि शान्त करती है,
 प्रतनुते सुखों को
 प्रन्तः विस्तारती है,
 दुःखं प्रन्तः करणों के
 हठात् दुःखों को
 दलयति जोर के साथ
 इष्ट - नष्ट करती है,
 विरहं प्यारों के
 पिनाष्टि विरह (वियोग) को
 किम् वह पीसती है (प्यारों से मिलाप
 निखद्यं कराती है,
 न कुरुते वह कौन सी बात है
 जिसे दोष रहित प्रकार से
 सिद्ध नहीं करती है॥

यः जो कोई
 त्वं तुम्हें
 ध्यायति ध्यान करता है,
 वेति जानता है,
 विन्दति जप करता है
 जपति जप करता है
 आलोकते देखता है
 चिन्तयति विमर्श करता है
 प्रवेति पीछे चलता है
 प्रतिपद्यते प्रारम्भ में आता है
 कलयति स्तुति करता है
 स्तौति स्तुति करता है
 प्राश्रयति आश्रय लेता है
 प्रचरति पूजता है

अम्बकवल्लभे! हे शिव की प्यारी (देवी)

यः + च और जो
 त्व तुम्हारे
 गुणान् गुणों को
 प्रादशत प्रादर के साथ
 प्राकर्णयति समाहित होकर सुनता है
 तस्य उस पुरुष के
 गृहात् घर से
 श्री भोग मोक्ष रूप लक्ष्मी
 न नहीं
 प्रपैति दूर जाती है (उसके वश रहती है)
 विजयः मेद पर विजय
 तस्य उसके
 प्रयतो प्रागे प्रागे
 धावति दौड़ता है॥

वह सब दुःखों और आत्मा के आवरण रूप मोह को जीत कर आत्मलाम प्राप्त करता है॥

किं किं दुःखं दनुजबलिनि

दनुजदलिनि! हे राक्षसों की संहार करिणी देवी सुखरनुते! हे श्रेष्ठ देवताओं से नमस्कार की गई देवी!
 किं किं कौन कौन सा (वह) कौन कौन सी
 दुःखं (ऐसा) दुःख है सिद्धिः सिद्धिः है
 स्मृतायां (जो तुम्हारे) स्मरण करने पर प्राचितायां (जो तुम्हारी) पूजा करने पर
 न दीयते नष्ट नहीं होता है? न प्राप्यते प्राप्त नहीं होती है
 कुलकमलिनि! हे संस्मर विस्वरूपी कमल को रिवलाने वाली (देवी) (वह) कौन कौन सा
 का का कीर्तिः कीर्ति है
 स्तुतायाम् (जो तुम्हारी) स्तुतिकरने पर चित्तम् चित्तम्
 न चिन्वते जाना नहीं जाता है॥

देवि!

हे देवी (चमकाने वाली स्वप्रकाश)

ये दुर्ध दुर्धर-

जो धारण करने के लिए कठिन प्रयत्न बहुत भयानक मृत्यु के

लक्ष्मी लक्ष्मीको (भोगलक्ष्मी) वशीकरणा चूर्ण - वश करने की प्रौषधि के सहोदरा सगे भाई (समान प्राप्ति रखने वाले)

लक्ष्मी लक्ष्मी तुम्हारे पादपंकज- चरणा कमलों की रजांसि धूलिणां (धूलि के करण)

चिरं अनन्त काल तक जयन्ति जयनशील रहती हैं यानि जो धूलि के करण नृणां मनुष्यों के प्रणाम करने ललाटे माथे पर वाले

प्रणाम- प्रणाम करने से मिलितानि (माथे पर) लगी हुई हुए देव लिखितानि प्राशब्ध में लिखे हुए दुश्चराणि बुरे प्रचरों को लुम्पन्ति मिट देते हैं ॥

वे सभी प्रापतियों से छुटकारा पाते हैं

कृतान्त- मुखान्तरस्था मुख में पड़े हुए हैं,

कालि! हे महाकाल की घनपाश - घनी कांसियों से नितान्तबद्धा: जोर से बांधे गये हैं, चण्ड! हे तेजोमय भयानक रूप धारण करने वाली

ये (प्रौर) जो चण्ड - कठिन गुरुकल्मष - भारी पापों के सिन्धुमग्ना: समुद्र में डूबे हैं,

तान् ऐसे सभी प्रतिभक्तों को स्मृता एव त स्मरणा की हुई ही (जुही वे तुम्हारा भक्ति से ध्यान करते हैं)

पासि बचाती है मोचयसि छुटकारा दिलाती है तारयसि पारलंघाती है

रे मूढाः	प्रे मोह मे डूबे हुए	उन्निद्र -	खिले हुए
किं	संसारिक पुरुषों	प्रम्बुरुह -	कमल के
तपसा	क्यों	प्रातपत्र -	छत्र से
(प्रयं -	तपस्या (ज्ञान रहित) द्वारा	सुभगा	शोभायमान
कायः	यह (प्रपत्ता) } इस शरीर को	लक्ष्मी	लक्ष्मी
वृथा एव	प्राप्ति के	पुरे	तुम्हारे प्रांगे
परिकलिष्यते	निर्णय ही	धावति	दैर्घ्ये
	(तुम से) कह दिया		
	जाता है		

(ज्ञान प्राप्त करने के बिना तपस्या और चान्द्रायण व्रत इत्यादि कुछ प्रात्म-ज्ञान नहीं दे सकते)

बह्म दक्षिणैः षड् दक्षिण वाले

यज्ञैः वा यज्ञों से

इतरे गृहाः (कुछ पुरुषों) प्रपन्न

रिक्ती कियन्ते श्रमाली कर देते हैं

प्रविनाशिनो भक्ति श्रवण याद (तुम से) भक्ति है

प्रविनाशिनो-तीन काल में निरा

भगवती देवी के

पादद्वयी दो चरणों की

से व्यताम् सेवा कीजिये

{ निरस्त - हटे हुए
 { समस्त - सभी
 { दैन्यः दीनताओं वाला (मैं भक्त)
 मेरी सभी दीनताएं हट चुकी हैं
 कंचन किसी से भी
 (न ^{अभी मांगता}
 लाचे कुछ न मांगू (निरपेक्ष
 स्वतन्त्र रहूँ
 कंचन किसी को भी
 न वञ्चयामि न छूँ उगाऊँ
 कंचन किसी की भी
 न सेवे सेवान करूँ
 ह श्लक्ष्णं सुन्दर
 वसे वस्त्र धारण करूँ
 (चित्स्वरूप से सज्जुं
 मधुरम् स्वादिष्ट
 प्रक्षि भोग भोगूँ

{ निरस्त - हट्टी हुई
 { समस्त - सभी
 { दैन्यः दीनताओं वाला (मैं भक्त)
 कंचन किसी से भी
 न लाचे कुछ नहीं मांगता हूँ
 (मैं स्वतन्त्र और परिपूर्ण हूँ)
 कंचन किसी को भी
 न वञ्चयामि कपट से नहीं उगाता हूँ
 (मेरे अन्तः करण शुद्ध हैं)
 कंचन किसी की भी
 न सेवे सेवा नहीं करता हूँ
 * श्लक्ष्णं सुन्दर (बारीक)
 वसे वस्त्र धारण करता हूँ
 मैं चित्स्वरूप हूँ)
 मधुरम् स्वादिष्ट
 प्रक्षि भोग भोगता हूँ
 वस्त्री उत्तम चित्प्रतिकर्ष
 भजे विमर्ष करता हूँ
 (क्योंकि)

कुलकामधेनुः सभी अभिलाषाओं
 देवी को पूर्ण करने वाली
 मे तेजवाली देवी
 हृदि मेरे
 स्फुरति हृदय में
 विकसित होत है॥

शब्दब्रह्ममये!

स्वच्छे!

देवि!

हे निर्मल चित्स्वरूप!

हे सृष्टि-स्थिति-संहार

रूप की डा करने वाली!

तीनों प्ररीशों में व्यापक

होने से प्रोभावाली!

हे परमेश्वर की स्वातंत्र्य

प्राप्ति!

जैसी वैसी छोड़ी मेरी प्राप्ति

है वैसी

जप

प्रौर मेरी पूजा को

स्वीकार कर॥

त्रिपुरसुन्दरी

देवी त्रिपुरा

दर्शनात्

दर्शन से

पापशमनी

पापों की नाशकारिणी

जपात्

जप से

मृत्युविनाशिनी मृत्यु का भय

दूर करने वाली है

पूजिता

पूजा की गई (देवी)

दुःख-

दुःखों प्रौर

दुर्भाग्यहरा

दुर्भाग्यों को हरने वाली

(बनती है)

जप

पूजा

गृहाण

सर्वे

सभी

साधको

मोक्षसिद्धि के अभिलाषी

नन्दन्तु

प्रानन्द प्राप्त करें

विदूषकाः

दोष सहित पापी जन

विनश्यन्तु

नष्ट हो जायें (उनकी पाप

करने की प्रवृत्ति शून्य होकर

वे भी दोषरहित हो जायें

मे

मुझे

शाम्भवी

शाम्भव (अभेदमय)

प्रवस्था

प्रवस्था

प्रस्तु

रहे

गुरुः

मेरे गुरुदेव

सदा

सदा व सर्वदा

प्रसन्नो

सुख पर अनुग्रह करने वाले

अस्तु

रहे

यामिनी नाथ -

चन्द्रमा की

लेखालङ्कृत -

कला से सुशोभित -

कुन्तलाम्

केशों वाली (देवी)

भवसन्ताप -

ससार के दुःखों ~~स्वी~~ को

निर्वापण -

हराने के लिए

सुधानदीम्

प्रमृतनदी रूप

भवानीम्

देवी को

नमामि

मैं प्रणाम करता हूँ

मन्त्रहीनं मन्त्ररहित
क्रियाहीनं क्रियारहित
विधिहीनं विधिरहित
च

यद् जो कुछ
गतम् मुझसे हुआ
देवि! हे देवी
परमेश्वरी परमेश्वर की प्राप्ति

त्वया प्राप
तत् उस वह सब कुछ के लिये
कृपया कृपा करके
दाम्यताम् दामा करें

अथ प्रम्बास्त्वः चतुर्थः

याम्	जिसे	प्रम्ब
मनयः	ऋषि मुनि	
पुष्पनी		
पुराणी	प्रनादिकाल से सिद्ध	
प्रकृतिं	प्रकृति (स्वभाव)	
प्रामनन्ति	कहते हैं,	
याम्	जिसे	
{ श्रुति -	वेदों और शास्त्रों के	
{ रहस्यविदो	सार को जानने वाले	
	(ज्ञानी पुरुष)	
विद्या	शुद्ध विद्या	
इति	इस नाम से	
वदन्ति	पुकारते हैं	
ताम्	उसी	
{ प्रार्थ -	प्रार्थ से	
{ पल्लवित -	प्रोभायमान बनाये	
{ शंकररूप -	शंकररूप की	
{ मुद्रां	मुद्रा (निशान) वाली	
{ देवीं	देवी को	
प्रनन्यप्रारणाः	जिसका कोई	
	दसरा देवी के बिना	
	सहारा नहीं है, ऐसा	
	में भक्त	

जिसने प्रपत्ता प्राधा स्वरूप शिव को
 प्रर्पण कर के (उसे चैतन्य रूप बना
 कर) शक्तिमान बनाया है और उसके
 स्वरूप में अपनी शक्ति की मुद्रा स्थापित
 की है

प्रारण
 प्रपद्ये प्रारण होता है

प्रम्ब! हे माता!
 तव तुम्हारी
 स्तवेषु स्तुति करने में
 वचसां वेदों वारिणों के
 प्र वचसां वेदों की वारिणों के
 प्रकर्तकारिण जिनका कोई कर्त
 गुम्फनानि नहीं है ऐसी
 तावत् कमिष्य ससूह
 कुण्ठी भवन्ति कुण्ठित हो जाती हैं
 डिम्बस्य मुभ
 प्रसौ मूर्ख की
 प्र स्तुति: कड यह
 प्रसमञ्जसा अपि यथापि प्रयुक्त भी
 वात्सल्य- प्रेम से स्नेह भरे
 निघ्न- कोमल
 हृदयां हृदय वाली
 भवतीं प्राप को
 धिनोति प्रसन्न करती है।

प्रम्ब! हे माता!
 तव तुम्हारी
 स्तवेषु स्तुति करने में
 तावत् तो
 वचसां वेदों की
 गुम्फनानि सुन्दर रचनाएँ
 प्रकर्तकारिण जिनका कर्ता
 (परमेश्वर के बिना)
 कोई नहीं है

ठ्योम इति चिदाकाश
 बिन्दुः इति ज्ञान
 नाद इति विज्ञान
 { इन्दुलेश्वा- चन्द्रमा की
 { रूपा इति कला रूप
 वाग्भवतनूः वाणियों के
 इति उत्पाति स्थान
 रूप

मातृका इति माता रूप
 निब्यन्दमान- निकलते हुए
 सुख- आनन्द (वैरी)
 बोध- ज्ञान रूप
 सुधास्वरूपा प्रमृत् के स्वरूप
 वाली (आप देवी)

भाग्यवता भाग्यवान्
 जनानां भक्त जनों के
 मनसि मन में
 विद्योत्तसे विकसित (प्रकर)
 होती है

प्रम्ब हे माता
 आविर्भवत् प्रकट बने हुए
 पुलकसन्ततिभिः रोमाञ्चों की
 पंक्तियों से युक्त
 शरीरैः शरीरों से
 निःष्यन्दमान- बहते हुए
 सलिलैः जल से युक्त (अश्रुधारा से भरे)
 नयनैः नेत्रों से
 च प्रौर
 गद्गदपदाभिः गद्गद आ शब्दों वाली
 वाग्भिः (हिचकी बंधे हुए)
 ये वारिणों से
 तव जो भक्तवर
 पादौ तुम्हारे
 निट्यम् चरणों को
 हृदयेषु निरन्तर
 उपासते प्रपने हृदयों में
 त एव पूजते हैं (मन में धारणा
 धन्याः करते हैं)
 वे ही भक्त
 श्लाघ्य हैं
 (आप से एकता प्राप्त करने
 के अधिकारी बनते हैं)

देवि! हे देवी
वक्त्रं (ऐसा) मुख
यत् जो

भवत्याः प्रापकी
प्रभिष्टुतये बार बार स्तुति
करने के लिए

उद्यतम् उद्योग युक्त रहो,

शिरः (पौर) ऐसा) सिर
प्रपि भी

यत् जो

तुभ्यं प्रापको

नमः नमस्कार

करोति करता है, ही

चेतश्च पौर (ऐसा) मन

यत् जो

त्वयि प्राप में (प्राप के विमर्श में)

परमेश्वरम् लीन है ही

प्रह प्रम्ब! हे माता !

तानि - यह तीनों बातें

कस्य अपि किसी ही विरले भक्त को

कैः अपि किन्ही उ

तपो विशेषैः उत्तम तपों के बल से

भवन्ति प्राप्त होती हैं॥

मूलालवाल कुहरात् उदिता यवानि
 निर्भिद्य षट् सरसि जानि तडित लतीव
 ध्रुयोपि ध्रुवमण्डले तत्र विशसि ध्रुवमण्डले-
 निःप्यन्दमान परमामृत तोयरूपा

भवानि! हे देवी!
 { मूलालवाल- मूलाधार से
 कुहरात् उदय में आई हुई
 उदिता (उदय करके)

षट् - छः
 सरसि जानि कमलों को [मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक छः स्थान
 तडित लता इव बिजली की कड़क नाभि, हृदय, कण्ठ, तालु, भ्रूमर्ध्या,
 निर्भिद्य की तरह (बहुत ही जल्दी) ब्रह्मरन्ध्र
 फाड़ कर

भूयः अपि फिर
 { ध्रुवमण्डलेन्दु - निष्कलमण्डलवाले (प्रमा कला)
 निःप्यन्दमान - चन्द्रमा से
 परमामृत - प्रवाहरूप में निकलते हुए
 तत्र उत्कृष्ट प्रमृतके (चित् प्रमृतरूप)
 जल तोयरूपा जल रूप (प्राप)

तत्र उही मूलाधार में
 विशसि प्रवेश करती हो॥

देवि! हे देवी,
यदा जब
ते तुम्हारी
मुग्धः सुन्दर (मनोहर)

करा द्वाविधिः नेत्रों की दृष्टि

एकम् अकेले

दग्धम् जले हुए

मदनम् कामदेव को

अङ्कुरां चकार (अङ्कुर निकालने लगी)

उसे पुनर्जीवित करने लगी

तदा प्रभृति तब से

इन्दुमौलिः शङ्कर

ललाटनेत्रं माये के नेत्र को

सत्यं सचमुच ही

द्विया श्व मानो शरम के मारे

मुकुलीकृतम् बन्द किया हुआ

श्व जैसा

धत्ते धारणा करता है॥

गिरिराजकन्ये
प्रज्ञातसंभवम्

हे पार्वती,
जिसके मातापिता
ही विदित नहीं,

(प्रनाकलित-
प्रन्ववायं

न जाने हुए
कुल वाले
जिसका कुल ही किसी को
विदित नहीं,

भित्तुं
कपालिनं
प्रवाससम्
प्राद्वितीयम्

मिथ्ठा भित्ता करने वाले,
कपालधारी,
नगे,
जिसके समान कोई
दूसरा नहीं,

शम्भुं

ऐसे शङ्कर को

भवत्याः

प्रापके

करग्रहण-

पाणिग्रहण
(प्रापके साथ विवाहरूप)

मंगलतो

कल्याण से

पूर्व

पहिले

क एव

भला कौन

बुबुधे

जानता था ?

(प्रणीत कोई भी नहीं जानता था)

शुद्धोः
चर्माम्बरं

शिव का
मृगछाला इत्यादि
खालों के वस्त्र पहनना,

शुद्धभस्म-
विलेपनं च

और भस्मशान का भस्म (अर्थात् मूर्तियों का भस्म)
शरीर पर मलना,

भिद्धारनं च

और भिद्धार करने के लिए घोंसना
परलो के प्रसी में
नरन नरनं च न नाचना, तथा

क
वेतालसंहति -

वेताल, भैरव इत्यादि
के समूह का

परिग्रहता

कुटुम्ब रूप होना

गिरिजे!

हे पार्वति!

तव साहचर्यात्

तुम्हारे उसके (शिव के)

साथ चलने से

शोभां बिभर्ति

शोभा को धारण
करते हैं॥

शंकर का यह सब व्यवहार जो सांसारिक दृष्टि से निन्दित
है (नंगा रहना, भस्ममलना, भिद्धार मांगना इत्यादि)
देवी के संग रहने से उसके (शंकर के) प्रभाव को
बढ़ता है॥

मातः!

हे माता!

{ कल्प-
उपसंहरण-
केलिषु

कल्पों के
संहर करने की
की डाँष्टों में

खण्ड परमोः

कुल्हाड़ा प्रायुध है
जिसका (ऐसे शंकर के)

परिउत्तानि

प्रति तीक्ष्ण

चण्डानि

सर्वज्ञ (तथा)

ताण्डवानि

ताण्डव नृत्य

प्रपि

भी

1 तव

तुम्हारे

~~प्रालोकनेन~~

~~दृष्टि मात्र से~~

4 कोमलितानि

कोमल बनने हुए कार

5 जगत् विभूत्यै

जगत् के ऐश्वर्य
के लिये

2 लास्यात्मना

सृष्टिकारक तात्पर्य
परिग्रह रूप से

~~परिणमन्ति~~

~~परिणत हो जाते हैं॥~~

3 प्रालोकनेन

दृष्टि मात्र से

6 परिणमन्ति

परिणत हो जाते हैं

कल्याणि ! हे कल्याणरूपिणी !

प्रपञ्चिम - } जिसे इस शरीर के पश्चात्
तनो : } कोई दूसरा शरीर प्राप्त नहीं करना है
प्रधात जीवन्मुक्त बनने वाले - २४

जन्तो : जीवधारी को

कर्म साम्ये सति जब उसके पुण्य कर्म और

कारुण्यतो - पाप कर्म सम हो जायें
{ दैशिक कलात् - सद्गुरु की अनुग्रह दृष्टि का
{ समाश्रयेण आश्रय लेने से

निमेषात् क्षण मात्र में

{ निःशेष - सभी
{ पाप पटल - पापों के समूहों को
{ चिच्छदुरा काटने वाली

{ शाम्भव वेद ॥ शैव शास्त्रों की

{ टीका रहस्य उपदेश करने वाली

भवसि (तुम) बनती हो ॥

मुक्ता- मोतियों के
विभूषणावती भूषणों से
सुशोभित

नवविद्रुम- नये ~~रुद्राक्ष~~
आभा दीप्ति वाली

तारकिता - तारों से भरी हुई
सन्ध्या इव सन्ध्या जैसी

यच्चेतसि जिस भक्त के मन में
हफुरसि विकास में आती हो
(ध्यान में प्रकट होती हो)

स एकः एव वह प्रकेला ही (भक्त)

भुवनत्रय- तीनों भुवनों (लोकों) पर
सुन्दरीरां शासन करने वाली
उत्तम शक्तियों के

कन्दर्पपता कामदेवपन को
पंचश्रीं विनापि पांच बारों के धारण
किये बिना ही

ब्रजति प्राप्त होता है

जिस प्रकार कामदेव के प्रवेश से युवतियां मोहित
हो जाती हैं, इसी प्रकार सच्चे भक्त उत्कृष्ट शक्तियां
भी उत्तम भक्त के वश हो जाती हैं ॥

ये
तुम्हें

जो
तुम्हें

प्रमृतवाहिभिः

प्रपुत्राजैः

प्राप्यायमान
भुवनाम्

प्रमृतेश्वरी

ह्यम्

भावयन्ति

(X) मातः

ते

ब्रह्मादिभिः

सुरवरैरपि

प्रलङ्घनीयां

काल कदयां

ननु

लङ्घयन्ति

प्रमृतबहने वाले

किरणों के समूह से

तीनों भुवनों का

सींचन करने वाली

प्रमृत की स्वामिनी की

प्राप्ति

भावना करते हैं

हे माता

वे सभी

ब्रह्मा इत्यादि

श्रेष्ठ देवताओं से भी

जो पार करने योग्य

नहीं है ऐसी

काल कलना को

निश्चय ही

पार कर जाते हैं ॥

मातः हे माता

यः जो

स्फाटिक - स्फाटिक मणि के
(संगमर के)

प्रक्ष - प्रक्षमाला

गुण - रसी (पाश)

पुस्तक - पुस्तक -

कुण्डिक - प्रौर कुंडी से (कमण्डल)

प्रोभित

(तथा)

व्याख्या - व्याख्यान या
उपदेश करने के लिये

समुद्यत - उठाये हुए
करां हाथ वाली

शरद् इन्दु - शरत् ऋतु के

प्राभा चन्द्रमा जैसी

तेज वाली

पद्मासना व पद्मासन में बैठी हुई

भवती प्रापकी

हृदये हृदय में

उपास्ते उपासना करता है

स वही पुरुष

विश्वं - सभी जगत् के

कवि व तार्किक - कवियों प्रौर तर्क के जानने
वालों में

चक्रवर्ती सब से उत्तम बन जाता है ॥

वहीवतंसयुत
बर्बर केशपाशां

गुंजावली
कृत

घोर हतनहार
हार शोभां

प्यामां

प्रवालवदनां

सुकुमार हस्तां

त्वामेव

शवरीं

शवरस्य जायां

नौमि

केतज
मोर ~~के~~ पंखों से युक्त

बबर जैसे कोमल बालों वाली

गुंजाहारों से

किये हुए

घने वनःस्थल पर

हारों की शोभावाली

प्याम वस्त्रों

स रुद्र जैसे मुखवाली

कोमल हाथों वाली

पृथ्वी
हाथों में लिये हुए कार्तिक स्वामी
हैं जिसने ऐसे

तुम्हें उड़ी

शिकादिन

शमश्रुत (शिकादिन के रूप में शिव) की प्राप्ति
(शिकादिन के रूप में)

शवर (शंकर) की प्राप्ति की

में शरण लेता हूँ

शवर (शिव) (शिकादिन के रूप में)
की प्राप्ति

देवि! हे देवी!

मुग्धे! हे सुख सन्दर्प

किं क्य

त्वया तुने

{ नवलता - कोमल तथा सुन्दर

{ ललितेन लता जैसे

अर्धेन

प्रेम से पाले हुए

अपने प्राधे शरीर से

(के बदले)

विभो:

व्यापक शिव का

इदं

यह

परुषं

कठिन (खुरदुरा)

अर्धं

प्राधा शरीर

कीर्तं

मोललियां?

इति

इस प्रकार के

अपलीजनस्य

सखी जनों के

{ परिहास-

हंसी के (ठट्ठा)

{ वचंसि

वचन

तव

आपकी

{ मन्द-

कोमल (मन को हरने वाली)

{ स्मितेन

मुस्कराहट से

जडी भवन्ति

जड़ बन जाती हैं

मन्ये

ऐसा मैं मानता हूँ॥

अम्ब!

हे माता!

अयं

यह

{ ब्रह्माण्ड -

अनेकों ब्रह्माण्ड रूप

{ बुद्बुद -

बुलबुलों से के

{ कदम्बक -

अगणित समूहों से

{ संकुलो

तरंगायमान (तूफानवाला)

मायोदधि:

माया रूपी सागर

{ विविध -

नाना प्रकार के

{ दुःखतरंगमालः

दुःखों की तरंगों से भरहुषा

त्वत् -

तुम्हारे

ध्यान सन्तति -

ॐ निरन्तर ध्यान रूपी

महा -

बड़े

वडवामुखाग्रौ

वाडव अग्नि में

भटिति

द्वारा मात्र में (ध्यान करते ही)

पलयं

नष्ट लयभाव को

प्रयाति

प्राप्त जाता है (माया सागर का संहार हो जाता है)

आश्चर्यम्

यह बड़े आश्चर्य की बात है॥

दादायणीतीति कुटिलेति गुहारणीति
 काट्यायनीति कमलेति कलावतीति।
 एका सती भगवती परमार्थतोऽपि
 संदृश्यसे बहुविधा ननु नर्तकीव॥

भगवती	ऐश्वर्यशालिनी देवी
परमार्थतः	सच्चे स्वरूपसे
एका	एक ही (प्रद्वितीय)
सती अपि	होती हुई भी
दादायणी इति	दक्ष प्रजापति की बेटी,
कुटिला इति	टेढा चलने वाली कुण्डलिनी रूप,
गुहारणी इति	हृदय रूपी गुफाओं में वास करने वाली,
काट्यायनी इति	काट्यायन ऋषि की पुत्री
कमला इति	लक्ष्मी रूप अथवा कमल रूप संकोच विकासमय (सृष्टि संहार
कलावती इति ^(१)	कलाओं युक्त करने वाली)
<u>बहुविधा</u>	ऐसे ऐसे
ननु	निश्चय रूपसे
नर्तकी इव	नाचने वाली ह्री की तरह
बहुविधा	प्रनेकों प्रकारसे
संदृश्यसे	दीखती हो। (प्रनेकों रूप धारण करती हो)

(१) चन्द्रमा की १६ कला, ~~३६~~ शिवसे पृथिवी तक ३६ तत्त्व रूप कला,
 प्रकार से हकार तक ५० वर्ण रूप कला.

ईशो

हे ॐ ऐश्वर्यस्वरूप!

धन्याः

प्रताप्य प्रौर उत्तम भक्त

तव

तुम्हारे

{ आनन्द-

आनन्द ही

{ लक्षणां

लक्षणा है जिसका, ऐसे (तुम्हारे)

रूपं

रूप को

{ प्रताहत -

प्रताहत

(मध्यावाग) आघात रहित

नाम्नि

नाम वाले

देशे

स्थान पर

{ नादात्मना

नाद रूप से परिणाम

परिणतं

में हुआ हुआ

प्रत्यङ्मुखेन

(तथा) प्रत्यक्ष रूप से वाले

मनसा

मन से

परिचीयमानं

बढाया हुआ

नेत्रसलिलैः

अश्रु आंसुओं की धाराओं द्वारा

च

तथा

पुलकैः

सेमाञ्जों द्वारा (रोम हर्षों)

शंसन्ति

जोते हैं ॥

त्वं तुम
प्राप्तिनि चन्द्रामें
चान्द्रिका चान्दनी रूप (हो) (प्रकाश)

त्वं तुम
तिग्मरुचौ सूर्य में
रुचिः शीति प्रकाश रूप (हो)

त्वं तुम
पुरुषे पुरुष में
चेतना बुद्धिः

असि हो

2 { त्वं तुम
सलिले जल में
स्वादुता रस रूप
असि हो

1 { त्वं तुम
पवने वायु में
बल बल हो

ह्वं त्वं तुम
पिप्पिनि प्रीति में
ऊष्मा गर्मी (हो)

यदि यदि

त्वद्वत्ते (यह सब तत्त्वा) तुम्हारी
सत्ता विना

स्थात् हो

निरिवलं तो यह सब विश्व
निःसारमेव सत्ता रहित है॥

यत्	जो (यह)
ज्योतींषि	तारागण
दिवि	प्राकाश में
चरन्ति	फिरते हैं,
यत्	जो
प्रन्तरिक्षं	प्राकाश
पयांसि	जलों को
सूते	उत्पन्न करता है,
यत् च	~~प्र~~ जो
प्रहिः	शेष नाग
धरणी	पृथिवी को
धत्ते	धारण करता है,
यत्	जो
वायुः	वायु
वाति	चलता है,
यत् च	और जो
प्रनलो	प्रणि
उदरिः	अंची दीप्तिवाला :
प्राप्ते	पुष्ट हो
तत् सर्वं	वह सब
केवलं	केवल
तव एव	तुम्हारी ही
प्राप्त्या एव	प्राप्ति से ही
प्राप्ते	स्थिति प्राप्त
	किये हुए है॥

गिरिजे! हे पार्वती,

यदा - जब
त्वं हृदयं तुम ~~सकड़नी~~ स्वरूप का संकोच

इच्छसि तुम ग्रहण करना
चाहती हो

तदानीं तब

त्वं — तुम

वाक्

वाणी

और

वाणी और विचार की
भूमि

तर्कयोः

तर्क में

~~त्वम्~~

प्रनामरूपा नामों और रूपों रहित

भूमिः

स्थिति

प्रवस्था

प्रसि

हो

यदा वसनी

और जब

अब या

विकासं

जब

कैलाव को स्वरूप के संविकास को

उपग्राहि

प्राप्त करती हो तो

तदानीं

उस प्रवस्था में

त्वेत्

तुम्हारे

नामरूपगणना

नामों और रूपों

की गिनती

सुकरि भवन्ति"

प्राप्त हो जाती है॥

1) सभी स्थूल या सूक्ष्म वेशों के नाम और रूप तुम्हारे ही नाम और रूप हैं।

देवि!

हे देवी,

२ कृतिनः

क्रियावान् पुरुष

भोगाद्य

भोग (सांसारिक

तथा पारमार्थिक)

प्राप्त करने के लिये

3

भवती

प्राप को

प्रशाम्य

प्रशाम करके

५ -

भौश्यों के

1

किं करी कृत -

दास बने हुए

सरोज गृहा सहस्राः हजारों लक्ष्मियों

वाले

(अर्थात् एक नहीं अनंत लक्ष्मियों

और ऐश्वर्य उनके वश में हो जाते हैं)

चिन्तामणि -

चिन्तामणि स्तनों के

प्रचय -

समूहों से

कल्पित -

बनाये हुए

केलि प्रौले

कीड़ा रूपी पर्वत पर

कल्पद्रुम -

कल्पवृक्षों के

उपवन एव

भागों में ही

चिरं

अनंत काल तक

रमन्ते

ऐश्वर्य भोगते हैं

(कीड़ा करते हैं)॥

ईशे!	हे स्वतंत्र इच्छा
पशूनां	वाली स्वामिनी,
	जन्ममरणा में फंसे
	हुए जीवों के
परिवलं	सारे
संसारतापं	जन्ममरणा से उत्पन्न
	हुए दुःख को
त्वदधीनं	जो तुम्हारे ही अधीन है
दयया	प्रभुग्रह करके
हन्तुं	नाश करने के लिए
त्वमेव	तुम ही
भवसि	समर्थ हो।
वैकर्तनी -	सूर्य की
किरणासंहतिरेव	किरणों का समूह ही (जैसे)
निजं	आप उत्पन्न की हुई
घर्मं	गर्मी को
निजया एव	अपनी ही शक्ति से
	उत्पन्न की हुई
वृष्ट्या	बारिश से
शामयितुं	शान्त करने के लिये
शक्ता	समर्थ है॥

{ शुशा

प्रङ्कः चित्त है

मैले: जिसके माये का

(ऐसे शिव की)

देवि! की डन प्रील प्राप्ति

शक्ति: प्राण शक्ति

शरीर स्थूल शरीर

अधिदैवतम् शरीर के अधिष्ठित
देव अर्थात् दस इन्द्रियां

अन्तर्मा अन्तः करण

ज्ञान ज्ञान प्राप्ति

क्रिया क्रिया प्राप्ति

करणम् क्रियाओं का करण

आसन जालम् आसन समूह

इच्छा इच्छा (स्वातन्त्र्य) प्राप्ति

ऐश्वर्यम् सर्वकर्ता भाव, सर्वज्ञता भाव

आयतनम् आश्रय

य प्रावर्णानि प्रौर स्वरूप के छिपाने के विघ्न
(यह सभी कुछ)

त्वं तुम ही हो

तत् किं वह कौन सी वस्तु (भाव) है

यत् जो
न भवति तुम नहीं बनती हो॥

भूमौ	पृथिवी तत्त्व में
निवृत्तिः	निवृत्तिकला,
पयसि	जल तत्त्व में
प्रतिष्ठा	प्रतिष्ठा कला,
अनले	अग्नि तत्त्व में
विद्या	विद्या कला
मरुति	वायु तत्त्व में
शान्तिः	शान्ति कला
व्योम्नि	आकाश तत्त्व में
अतीतशान्तिः	शान्त्यतीत कला
उदिता	उदय में आई है
इति	इसी प्रकार
याः	जो
कलाः	कलायें
विश्वं	जगत् को (३६ तत्त्वमय)
किल	निश्चय
कलयन्ति	प्रकट करती हैं
अम्ब!	हे माता!
त्वदीयं	तुम्हारा
पदं	स्थान
तासां	इन सब कलाओं से भी
विदूरतरम्	बहुत ही ऊंचा है॥

जगच्छरण्ये
(जगत + शरण्ये)

यावत्
त्वदीयम्

पदसरोज-
युगं

हृदयेषु

पदे

न प्रङ्गीकरोति

(जब तक जीव मोह में फंसा ~~कर~~ हुआ जीव
तुम्हारी शरण न ले)

तावत्
समायेतां

विकल्पजालिलाः

कुटिलप्रकारः

तर्कग्रहाः

प्रलयं न गच्छति

हे देवी, जगत्की
रक्षा करने वाली,

जब तक

तुम्हारा

चरणा कमलों का

जोड़ा

हृदयों में

स्थान

प्रङ्गीकार न करे

तब तक

भिन्नभिन्न मत -

वादियों के

विकल्पों के कारण

पेचदार बने हुए

प्रति कुटिल प्रकार वाले

वादविवादरूपी हठ

स्वतन्त्र नहीं होते हैं॥

पार्वति! हे पार्वती,
 यत् जो
 एके कुछ उत्कृष्ट योगी
 मनः मन को
 करण - इन्द्रियों के
 मण्डल - समूह का
 सार्वभौमम् चक्रवर्ती राजा
 कृत्वा करके बना कर
 देवयान - देवताओं के मार्ग
 (प्राण) और
 पितृयान - पितामार्ग में
 (प्रपान)
 विहारम् फिरते हैं (प्रभ्यास करते हैं)
 तव तुम्हारे (सुषुम्णा)
 जाने मार्ग में
 निवेष्ट्य प्रवेश करके
 कारण पंचकस्य जगत् की सृष्टि इत्यादि करने के
 पंचकारणों (ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र
 के
 पर्वारिण सिरों को
 निज प्राप्तत्वम् प्रपन्न प्राप्त
 नयन्ति बनाते हैं॥
 प्रयात् इन सभी ऊंची पदवी प्राप्त करते हैं॥

मही प्रमुखासु

स्थूलासु

मूर्तिषु

कस्याश्चन अपि

मूर्तेः

यस्याः तव

वैभवम्

गिरां पट्या

अपि

वक्तुं

न शक्यते

सा

मया

किल

स्तुता अस्मि

इति

तितितितितव्यम्

पृथिवी से आरम्भ

करके

स्थूल

रूपों में से

किसी एक का भी

रूप का

जिस तुम्हारे (प्रकथनीय

स्वरूप का)

प्रभाव (महिमा) को

वारिणियों के स्वामी

(हूँ ब्रह्मा जी)

भी

वर्णन करने के लिये

असमर्थ हूँ

वही (ऐसे उत्कृष्ट महिमा वाली)

मुझ जैसे (तुच्छ) है

निश्चय ही

स्तुति की गई जा रही हो

यह बात (मेरी धृष्टता)

कृपया आप सह ले

(मुझे क्षमा करें)।

प्रम्ब !

षडध्व -

शुद्धी

भवती

{ कालाग्नि

कोटि -

{ रुचिम्

प्राप्तावनेषु

प्रमृतौघवृष्टिं

च

सकलीकृतौ

पूयामां

घनस्तनतरां

ध्यायन्त एव

जगतां

गुरवो

भवन्ति

हे माता,

ॐ: मार्गों को (वर्ण, पद, कला, तत्व, भुवन, ~~प्राप~~)

शुद्ध करने में (प्रभेद रूप बनाने में)

प्रापको

करोड़ों कालाग्नि रुद्रों जैसी

दीप्ति (तेज) वाली,

इन भुवनों को सींचने में (सृष्टि करने में)

प्रमृत से भरी हुई वर्षा रूप,

पौर

इनको सम्पूरा बनाने में

(स्थिति करने में)

पूयाम वर्ण

भारी स्तनों से मानो दूध देकर

माता रूप बनी हुई (प्रापको)

एकाग्रचित्त से ध्यान करते हुए ही

(तृण मात्र में)

सभी जगत्‌ओं को

गुरु (उत्तम माननीय सृष्टि इत्यादि

कर्म करने में समर्थ)

बन जाते हैं॥

प्रम्ब!
त्वां
कतिचित्
परा विद्यां
केचित्

प्रम्बरम्
कतिचित्
प्रातन्दमेव
कतिचित् च
मायाम्

त्वां
प्रपरे
विश्वं

प्राहुः

वयम्

साक्षाद्

प्रपद्मकरुणां

गुरुमूर्तिमेव

प्रामनाम

हे माता,
तुभको
कुछ भक्त
परा (उत्कृष्ट) ज्ञानरूप,
कुछ
प्राकाशरूप (चिराकाश)

कुछ
केवल प्रातन्दरूप ही
प्रौर कुछ
भेद उत्पन्न करने वाली माया रूप
तुभको
इन से भिन्न कुछ लोग
जगत् रूप ही
कहते हैं

(परन्तु) हम (इन से भिन्न भक्त)

(प्रापको) प्रत्यक्ष

पाररहित प्रपद्म, प्रपद्मरूप

सद्गुरु का स्वरूप ही

कहते हैं॥

सकल - हे सभी
 भुवन - भुवनों की
 मातः! माता!
 इह यहां
 वि बहभिः अधिक
 उक्तैः कहने से
 किं क्या लाभ है!
 (केवल इतनी प्रार्थना है कि)

त्वत्- तुम्हारा
 स्वरूप स्वरूप

कुवलयदलनीलं

कुवलयपुष्पों जैसा

बबरस्निग्धकेषुं

श्याम वर्ण

बबर जैसे चिकने (चमकीले)

पृथुतरकुचभार-

केषुं वाला

मोटे स्तनों के भार से

प्राक्रान्त-

घेरे हुए

कान्तावलग्नम्

सुन्दर कमर वाला

परं

निरन्तर ही उत्कृष्ट स्वरूप

नः

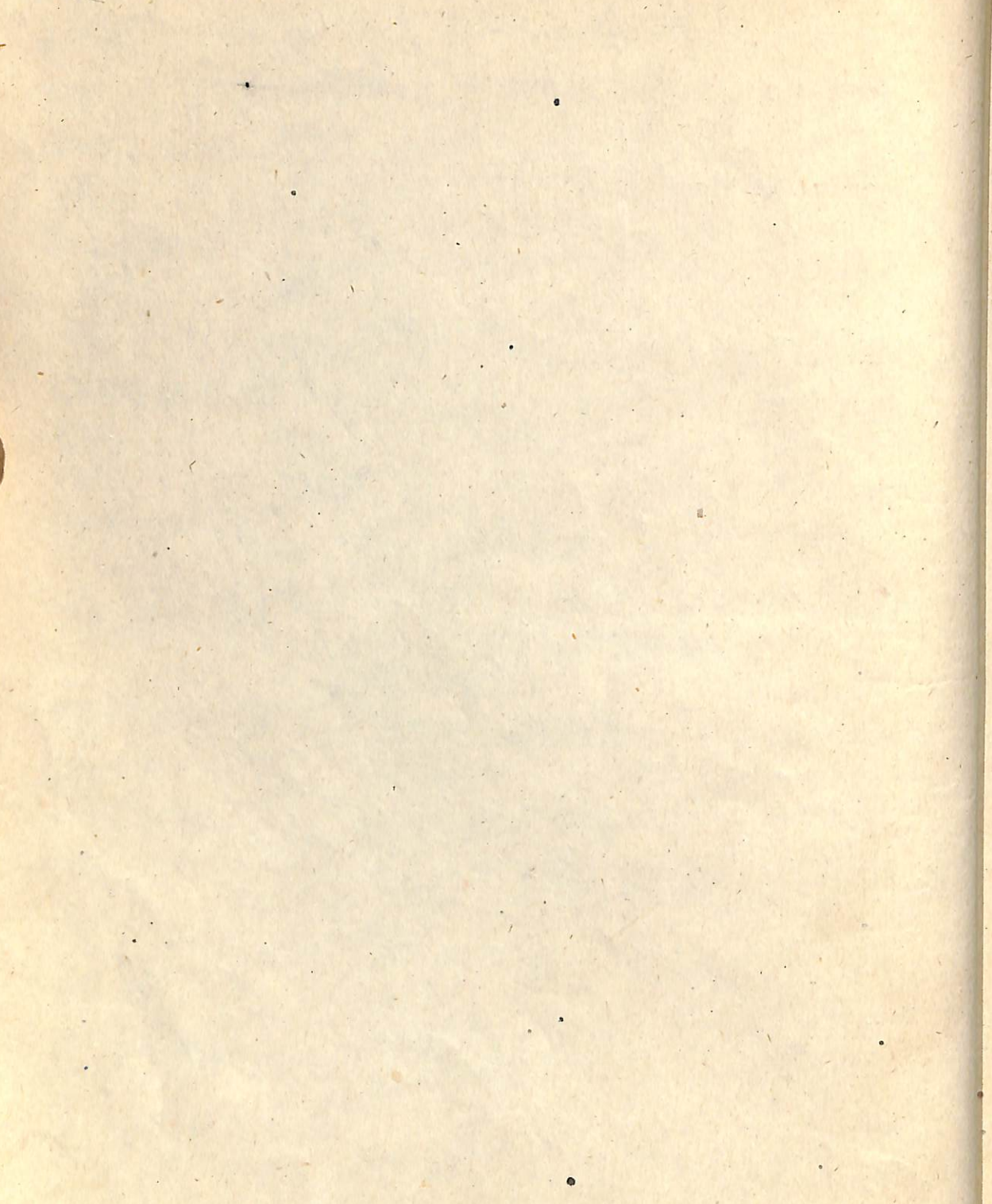
हमें

सन्ततं

नित्य

सन्निधताम्

पकट रहे ॥



सकलजननीस्तवः पञ्चमः

जगन्मातः	हे ~~जग~~ जगती को
जन्म ज्वर-	उत्पन्न करने वाली मां,
भय तमः	जन्म मरण रूपी ज्वर के
कौमुदि !	भय रूपी अन्धकार के लिये
प्रमी समयिनः	चांदनी रूप ! (अन्धकार को
प्रजानन्तः	नाश करने वाली)
प्रन्योन्य-	यह सभी भिन्न मतवादी
कलहैः	तुम्हारे सच्चे स्वरूप को
तव	न जानते हुये
मायाग्रन्थौ	एक दूसरे के साथ
परिलुठन्तः	झगड़ो करने के कारण
प्रवृणुम्	तुम्हारी
द्वयं गान्ति	माया रूपी गांठ में
वयं	गिरते फंसते हुए
ते भगवतीम्	बेबस हो कर
नमः	नाश को प्राप्त होते हैं।
कुर्वराः	हम
शूरान्	तुम्हें भगवती को
उपयामः	नमस्कार
	करते हुए
	पूरा में
	जाते हैं ॥

द्युति - तेज में
 तुलित - समान बने हुए
 नीलोत्पल - कमल जैसी
 रुचे! दीप्ति वाली (हे देवी!)
 वचः - वाणी, प्रौर
 तर्क - विचार से
 अगम्य - न जानने योग्य
 स्वरस - अपने ही रस से
 परमानन्दविभव - परमानन्दरूप
 ऐश्वर्य को
 प्रबोधाकारण जगाने वाले
 स्वरूप वाली
 (तुम देवी को)
 शिवस्य शिव की से भी
 आराध्याय आराधना करने योग्य
 (तुम देवी को)
 स्तनभर - भारी वचः स्थल के कारण
 विनम्राय झुकी हुई देवी को
 (जगत् की सृष्टि करने के लिये
 उद्योग में आई हुई)
 यस्मै कस्मै चन किसी अलौकिक (मनु, प्रौर वाणी के
 अगोचर)
 मुग्धाय सुन्दर (अपानन्द रूप)
 महसे तेज को (चित् रूप)
 नमो भवतु नमस्कार हो

लुठत- लुठकते हुए
 गुञ्जाहार- गुञ्जाफलों से (रतियों)
 स्तनभर- भारी वक्षःस्थल से
 नमन् भुकी हुई (के कारण)

{ उदञ्चद् - निकलते हुए
 घर्माभःकरा - पसीने के कटपों से परमाणुओं से
 गुणित- समान बने हुए
 नीलोत्पलरुचम् कमल की शोभा वाले युक्त मुख वाले
 (शिव के)

{ आ पार्थ वारा - प्रजन की रक्षा करने में
 प्रवरा - निपुण
 मृगयाकार- शिकारी के वेष से
 गुणित शोभित (कि शिव के)
 शवरं शिवं शिकारी रूप शिव के
 प्रन्वक् यान्ती पीछे पीछे चलती हुई

{ लुठत लुठकते हुए (स्पन्दमान)
 गुञ्जाहार - गुञ्जाफलों (रतियों) के
 स्तनभर - हारों के बीच से शोभित में लगे हुए तथा
 नमन् भारी वक्षःस्थलों के कारण के बीच में
 मध्यलालिका भुकी & हुई लटकते हुए
 शवरी कमर वाली - हार के बीच वाले प्राभूषण युक्त
 शिव शिकारिन रूप धारण किये हुए
 प्रहं शिव की शक्ति (पार्वती) को
 प्रन्वेमि में
 बार बार प्रणाम करता हूँ॥

तर्कघटना	वादविवाद करने वाले (भिन्नभिन्न मत वादी)
मिथः -	एक दूसरे के
कैशकेशि -	बालों को उखाड़ने के समान
प्रधन -	भागड़ों (कलह) के कारण
निधनाः	नाश को प्राप्त करते हैं।
{ प्राप्त -	{ और परमार्थ को जानने वालों की
{ विधियः च	{ विधियाँ (व्यवहार)
बहुप्रज्ञाभक्ति -	{ प्रत्यन्त विश्वास प्रेम
प्रणय विषयः	{ और नम्रता रूप विषय से पूर्ण (होती है)
गिरिसुते !	हे पार्वती !
प्रसीद	हम पर प्रसन्न हो जाओ
प्रत्यक्षी भव	(और) प्रकट रूप से प्रपन्न
देहि शरणां	स्वरूप दिखाओ
निरालम्बं	हमें प्रपन्न शरणा में ले लो
चेतः	(प्राश्रय रहित (हीन)
इदं	हमारा मन
पारिप्लवम्	इस (संसार रूप)
परिलुण्ठति	उपद्रव में डूब रहा है ॥

चेतः!
 यत्
 शुनां वा
 वहैर्वा
 रवग पारिषदो वा
 'प्रधानं
 कदा
 केन
 क
 इति
 कश्चित्
 कचिदपि
 न कलयाति
 'प्रमुष्टिमन्
 मम
 वपुषि
 विश्वासं
 प्रहाय
 विजहिहि
 सकल जननी मेव
 शरणां
 प्रपद्येष्टाः

हे मन!
 जो (यह शरीर)
 या तो कुत्तों का
 या तो 'प्रमिता' (जलाये जाने से)
 या तो पक्षियों
 के समूह का
 भोजन बनता है
 किस समय पर
 किस कारण से
 किस स्थान पर
 और इस बात को
 कोई भी पुरुष
 कहां भी
 (विचार नहीं करता है) ^{मही} जानता है
 इस (ऐसे शरीर) पर
 मेरे
 शरीर पर
 विश्वास (अभिमान)
 टूटते हैं
 छोड़ दे
 सबों की माता देवी के ही
 बचाने वाली की
 शरणा ली

देवि।

अनाद्यन्ता
भेद प्रणय -
रसिकापि
प्रणयिणी

यत्
त्वम्
परिणयविधौ
शिवस्य
गृहिणी
प्राप्तीः

यत्
भूतानाम्
सवित्री
प्रापि
पौलशज -
तनया
उद्भूः

तदेतत्
संसार -
प्रणयन -
महानाटक -
सुखम्

हे देवी

प्रादि प्रौर प्रन्तरहित
भेद के प्रेम को
स्वाद करने वाली होकर भी
प्रेम से भरी

जो
तुम
विवाह की विधि में
शिव की
पत्नी
बन गई

जो
जीवों की
उत्पन्न करने वाली
भी
हिमालय की
पुत्री (बनकर)
उत्पन्न हुई

वही यह सब
संसार के
प्रेम रूपी
बड़े नाटक का
सुख है ॥

ब्रुवन्त्येके तत्त्वं

भगवति!
 एके
 तव
 तत्त्वं
 सत्
 ब्रुवन्ति
 अन्ये
 असत्
 विदुः
 अन्ये परे
 सुकवयः
 सदसत्
 जाहुः
 परे
 सुधियः
 नैतत्सर्वं
 समाभिदधते
 देवि! शिवे,
 तत्
 एतत्प्रशेषं
 ननु
 त्वत्-
 माया-
 विलासितम्

हे ऐश्वर्यप्रालिनी देवी,
 कुछ लोग
 तुम्हारे
 स्वरूप को
 सत् रूप (भाव)
 कहते हैं,
 इन से भिन्न कुछ और लोग
 असत् रूप
 जानते हैं,
 इन से भी परे (कुछ)
 सर्वज्ञ (लोग)
 (तुम्हारे स्वरूप को) सत्
 तथा असत् दोनों ही
 कहते हैं।
 इन से भी परे (कुछ योगी)
 इनमें से कुछ भी नहीं
 (न सत् और न असत्)
 कहते हैं,
 हे देवी, हे शिव की प्राप्ति,
 तो
 यह सब कुछ
 निश्चय ही
 तुम्हारी
 माया प्राप्ति का
 विकास है॥

तलित कोटि -

ज्योति -

द्युति -

दलित -

बड्गुणिगहनं

पुनः अपि

सुधा वृष्टि -

वपुषा

स्वाधारं

प्रविष्टं

किमपि

प्रष्टाविष्ट

किररा

सकली भूतं

पूयामं

धाम

कुचभरतं

बर्बरकचं

अनिष्टं

भजे

करोउं बिजालियों के

प्रकाश की

दीप्ति से

काटी हुई

कः गुणिरूप जंगल (काम, क्रोध, लोभ, मोह,

वाले)

मद, अहंकार

फिर भी

अमृतवर्षा रूप -

स्वरूप से

प्रपने आधार में

प्रवेश की हुई किये हुए

किसी अलौकिक

प्रवृत्ति से

किरणों से

परिपूर्ण बने हुए

पूयाम वर्ण

स्वरूप को (देवी के)

ज्ञान किरण रूप स्तनों से

भुके हुए (देवी के स्वरूप को)

अब जैसे चमकीले स्वरूप को

बार बार (निरन्तर)

नमस्कार करता हूँ

चतुष्पत्रान्तः	चार पते वाले कमल (मूलाधार)
षट्दल -	के बीच में छः पते रूप (स्वाधिष्ठान)
भगवतान्तः -	दो त्रिकोणों के भीतर (इच्छा-ज्ञान-क्रिया और इनके वेद्य)
विबलये	तीन बार लपेटे हुई
स्फुरत् -	विकसित होती हुई
विद्युत्	विजली
वह्नि	अग्नि (तथा)
द्युतिद्युमणि	सूर्य के समान
नियुताभ	अनन्त
द्युतियुते	तेज वाले
प्राक्षे षडंशं	पहिले षट्दल कमल को (स्वाधिष्ठान)
भित्वा	फाड़कर
प्रथ	इस के पश्चात्
दशदलम्	दस पते वाले कमल को (मणिपूर-नाभि)
द्वादशदलं	फिर बारह पते वाले को (अनाहत - बृहदय)
कलाश्रं	फिर सोलह पते वाले को (विशुद्ध - कंठ)
द्व्यश्रं	फिर दो पते वाले कमल में (प्राज्ञा - भूमध्य)
गतवति गिरिसुते	जाती हुई है हिमालय की पुरी पार्वती,
नमस्ते	(सहस्रं ब्रह्मन्धि की ओर)
	तुम्हें नमस्कार हो

कुल केचित

महामाये!	हे महामाया,
केचित्	कुछ लोग
तव	तुम्हारे
वपुः	स्वरूप को
कुलं	कुल रूप (३६ तत्त्व रूप विश्वमय)
प्राहुः	कहते हैं
अन्ये	इन से भिन्न कुछ और
बुधाः	ज्ञानी लोग
अकुलं	कुलातीत (विश्वोत्तीर्ण)
	(मानते हैं)
परं	इन दोनों से भिन्न कुछ
तत्सम्भेदं	(इन दोनों) कुल तथा अकुल
	केमल रूप (विश्वमय तथा विश्वोत्तीर्ण)
समभिदधते	कहते हैं
अपरे	कुछ और लोग
कौलम्	कौल रूप
अपरे प्रमी	इन से भी उत्कृष्ट ज्ञानी
एषां	इन
चतुर्णाम् अपि	चारों से भी
उपरि	ऊपर (उत्कृष्ट)
किमपि	कुछ प्रलौकिक (अकथनीय) रूप
प्राहुः	कहते हैं (तुम्हारा स्वरूप मानते हैं)
तव तत्त्वं	तुम्हारे स्वरूप का
कथं	किस प्रकार
निश्चिनुमहे	हम निश्चय रूप से जानें
	(नहीं जाना जा सकता)

षड्वारण्यानी

षडध्व	छः मार्ग रूप
प्ररण्यानी	जंगल को
प्रलयरवि कोटि-	प्रलयकाल के
	करोड़ों सूर्यों के समान
प्रतिरुचा	दीप्ति वाली
रुचा	तेज से
षडध्वारण्यानी	छः प्रध्व (मार्ग) रूप
	वन को
भस्मीकृत्य	जला कर
स्वपदकमल-	प्रपने चरण कमलों पर
प्रहृष्टिरसाम्	के भुके हुए महत्क
	वाले (भट्ठों के
किमपि	का किसी प्रलौकिक
	प्रकटनीय
इन्दीवररुचिः	कमल की शोभा वाले
	(सकोचविकास मय)
शैवं वपुः	शिव के स्वरूप को
वितन्वानः	विस्तार से प्रकट करता हुआ
कुचाभ्याम्	ज्ञानक्रियारूप स्तनों से के बोझ से
	(दूधपिलाकर पालने वाली)
प्रातमः	भुका हुआ
शिव-	शिव का
पुरुषकारे	उद्योग (शक्ति)
विजयते	जय शील है (सभी से उत्कृष्ट है,
	बढ़ चढ़ कर है)

प्रकाशानन्दाभ्यां

प्रम्ब! हे माता,
 प्रविदित - पहिले न जानी हुई
 प्रविदित चरी - पहिले सचकी तरह
 न जानी हुई
 मध्यपदवीं संवित में
 प्रकाशानन्दाभ्यां चित और आनन्द द्वारा
 प्रविष्य प्रवेश करके,
 रवि प्राप्ति समाख्यं सूर्य और चन्द्रमा नाम वाले
 (प्राण तथा अपान)
 एतत् द्वन्द्वं इस जोड़े को
 कवलयन् ग्रास करता हुआ
 ऊर्ध्वं नादं ऊपर वाले नाद में
 प्रविष्य प्रवेश करके
 लय - लय रूप (प्रात्मसात् रूप)
 दहन - प्रग्न से
 महमीकृत - जलाये हुए (प्रात्मसात् किये हुए)
 कुलः सभी तत्त्वों वाला,
 जन्तुः जीव
 ते तुम्हारे
 प्रसादात् अनुग्रह से
 प्रकुलं तत्त्वों से अतीत
 शिवं शिव में
 प्रविशति प्रवेश करता है
 (शिवरूप ही बन जाता है)

प्रियङ्गु - प्रथम वर्ण अङ्गों सहित,
 प्रथमाङ्गीम् - लाल रंग के
 प्ररुण - बहुरूपी
 तरवासः - पत्तों वाले,
 किसलयों - १ पूरी तरह खिले हुए.
 समुन्मीलन - मोती रूप फल से की
 मुक्ताफल - बहुलात से
 बहुल - सजावर वाले
 नेपथ्य - फलों युक्त (और)
 कुसुमाम् - ज्ञान क्रिया रूप दो स्तनों के
 स्तन द्वन्द्व - फैलाव रूप
 स्फार - गुच्छे से
 स्तवक - भुकी हुई
 नमितां - (४ भोग तथा मोक्ष सिद्ध करने वाली)
 कल्पलतािकां - कल्पवृक्ष रूप लता के रूप
 त्वां - तुम्हारे स्वरूप को
 सकृत् - एक ही बार (निरन्तर)
 ध्यायन्तः - ध्यान करने वाले (भक्त)
 शिवचिन्तामणिपदे - शिव रूपी चिन्तामणि स्तन
 दधाति - के स्थान को
 धारण करते हैं॥

देवि! हे देवी,

भवानी

भवानि!

तुम

प्रत्यगा

हे देवी,

तुम

नित्य नवीन

(प्रविनाशी स्वरूप)

* परनादा मृत नदी परम नाद (ग्रहंता, सकृत्विम)

शिव -

चिदमृत -

अब्धि -

प्रणयिनी

रूप अमृत की नदी को

शिव रूप -

चैतन्य का अमृत को

सागर में

पहुँचाने वाली (जीव को शिव

के साथ एकता करने वाली)

पञ्चाधार -

ॐ: प्राधार रूप (काम, क्रोध, लोभ,

प्रावर्तै:

मंवरों से

मोह, मद, अहंकार)

अपरिमित -

अनन्त -

मन्त्र -

मन्त्ररूप -

अभिपटलै:

लहरिद्वयों के समूहों से

चलन

चञ्चल -

मुद्राकेतै:

मुद्रारूप भागों सहित

बहविधलसत्

अनेक प्रकार से विकसित

दैवत भवै:

देवता (इन्द्रिय रूप) ग्राहों से भरी

कम सोलोमि:

कम से चलने वाले प्रवाहों से

* वहसि

तुम चलाती हो (शिव सागर में पहुँचाती हो)

प्रम्ब! हे माता,
 मही पृथिवी,
 पाथो जल,
 वहि प्रग्न
 श्वसन वायु
 विगट् प्राकाश
 प्रात्मा जीवात्मा (प्रमाता)
 इन्दु चन्द्रमा (प्रमेय)
 रविभिः (तथा) सूर्य रूप (प्रमारा)
 वपुभिः स्वरूपों से
 ग्रहाण्यैः ग्राह हुए प्रज्ञों सहित
 प्रपि से भी भी
 तव तुम्हारी
 माहिमा महिमा
 कियान् कितनी बड़ी है (जो वर्णन
 नहीं की जा सकती)

प्र भगवति! हे देवी,
 प्रमूनि यह प्राणों
 त्वयि तु तुम
 परम व्योमवपुषि परमचिदाकाश स्वरूप में
 पुणुतरं अवस्थां प्रत्यन्त सूक्ष्म अवस्था को
 प्राप्तानि पहुंच कर
 ने कुत्रापि कहीं भी नहीं
 प्रालोक्यन्ते दिखाई देते हैं।

मनुष्याः	मनुष्य
तिर्यञ्चो	पशुपक्षी इत्यादि
मरुत	देवता समूह
इति	इस प्रकार
इदं	यह
लोकत्रयम्	तीन लोकों का समूह
त्रिगुण -	तीन गुण रूप (सत्त्व, रज, तम)
लहरीकोटि-	करोड़ों लहरियों से
लुठितम्	वेगाकुल किया हुआ
भवाम्भोधौ	संसार सागर में
मग्नम्	डूबा हुआ है,
मातः	हे माता,
अत्र	इन में
क्षयन	किसी एक पर
तव करुणा	दया से तुम्हारी.
करावः चेत	अनुग्रह की दृष्टि रह जाये हो, तो
शरीरी अग्रं	वह जीव
सद्यः	तटस्थानात्
परमानन्द -	परमानन्द -
तनुताम्	स्वरूप भाव को
व्रजाति	प्राप्त होता है ॥

मुनयः

मननशील पुरुष

सकलजननीमेव

जगत् की माता

देवी को ही

कला

क्रिया शक्ति रूप

प्रज्ञा

बुद्धि रूप

प्राद्या

सब का आद्य

समयम्

परम सिद्धान्त रूप

प्रभुभूति

अहं विमर्श के अनुभव रूप

x शिव कथा

शिव का विमर्श रूप

गुरु

गुरु रूप

पारम्पर्य

गुरु परम्परा रूप

विनय

आदर रूप

उपदेश

उपदेश रूप

x समस्ता

समस्तता

प्रमाण

प्रमाण रूप

निर्वाण

मुक्ति रूप

परमम्

उत्कृष्ट

प्रतिभूतिम्

ऐश्वर्य रूप

परगुहं

अत्यन्त रहस्य

माया रूप

विधि

विधि रूप

विद्या

विद्या रूप

प्राहुः

इन इन अनन्त नामों से

पुकारते हैं

प्रलीने शब्दों से

शब्दों से शब्द इत्यादि समूह के
प्रलीने लय हो जाने पर
तत्तु तदत्त इसके पश्चात्
विरहै बिन्दु विभवे ज्ञानों के ऐश्वर्य के
हट जाने पर

ततः इसके पश्चात्
तत्त्वे

प्रवृत्तिनिभिः प्राठवर्गों की
प्रनुपाधिनि उपाधिरहित
उपरते प्रांत होने पर
प्राक् प्राक् पर्वणि प्राक् की प्रवस्था का
प्रिते प्राश्रय लेने पर
योगी योगीवर

प्रावारुण्यां प्राक् ही नाम वाली
परतनु उत्कृष्ट स्वरूप
प्रनुकलित - भली प्रकार विमर्श

चिन्मात्राहनां प्रति सूक्ष्म और चैतन्य रूप
स्वसंविधिं प्रपत्नी संवित् (प्रहन्ता) का
रसगति चमत्कार लेता है
(चिन्मनन्द मय बन जाता है)

परानन्द -	परमानन्द - (ज्ञानन्द शक्ति)
आकाश	स्वरूप
निश्चय -	असीम तथा अनन्त
शिवैश्वर्य -	शिव की ऐश्वर्य शक्ति के (क्रिया शक्ति)
वपुष	स्वरूप
निराकार ज्ञान	अति सूक्ष्म ज्ञान शक्ति के
प्रकृतिम्	स्वभाव वाली,
अनवच्छिन्न -	अपार -
करुणाम्	अनुग्रह रूप
भूतानां	सभी जड़ चेतन पदार्थों की
सवित्री	उत्पन्न करने वाली (सृष्टि शक्ति) (इच्छा)
निरतिशय धाम -	जिस सब से उत्कृष्ट अवस्था का
आरूपदपदं	(परमशिव)
भवतीमेव	आश्रय बना हुई
भजतां	केवल आप ही का
भवो वा	विमर्श करने वालों को
मेहो वा	या संसार ही
भवतु	या मुक्ति ही हो
	हो॥
(उनके लिये संसार और निःसंसार भाव दोनों एक समान हैं॥)	

जगत्काये कृत्वा

जगत्	जगत् को
काये	प्रपने प्ररीरमें (स्वरूपमें)
कृत्वा	विमर्श से लय करके,
तमपि	उस प्ररीर को भी
हृदये	हृदयमें (संवितमें)
तच्च	उस हृदय को भी
पुरुषे	पुरुष में (जीवात्मा)
तमपि	उस
बिन्दुस्थं	बिन्दु में ठहरा हुआ (ज्ञान)
पुनर्वा	पुरुष को भी
परनादशब्द- गहने	परनाद नामवाले (ईश्वर तत्त्व)
तदेतत्	घने स्वरूप गहरे
ज्ञानाशब्दे	उस परनाद को भी
	ज्ञान नाम वाले स्वरूपमें
	(सदाशिव तत्त्व)
तदपि	उस सदाशिव अवस्था को भी
परमानन्दविभवे	परमानन्दरूप ऐश्वर्य में
	(ऊपर से नीचे तक एक दूसरे
	में क्रमशः लय करके)
महायोगमाकारे!	हे चिदाकाश रूप देवी
त्वदनुभवशीलो	प्राप के अनुभव (विमर्श)
	स्वभाव वाला योगी
विजयते	सब से उत्कृष्ट (परमशिव)
	अवस्था को प्राप्त करता है॥

विद्ये! हे वेदों के रूप में व्यापिनी
 वेद्ये! हे जानने के योग्य
 विद्ये! हे सभी विद्याओं के रूप
 विविधसमये! हे नाना सिद्धान्तों के रूप
 वेद जननि! हे वेदों की माता
 विचित्रे! हे नानाता रूपों वाली (भेद मयी)
 विष्वाद्ये! हे सभी जगत् के अद्य रूप
 विनयसुलभे! हे भक्ति से सुप्राप्य
 वेद गुलिके! हे वेदों की सार रूप!
 शिवाज्ञे! हे शिव की आज्ञा (स्वतन्त्र इच्छा)
 श्रीलक्ष्म्ये! हे स्वभाव में अटल स्थिति वाली
 शिवपदवदन्त्ये! हे हि शिव के साथ ऐक्य दिलाने वाली
 शिवनिद्ये! हे शिव की साररूप स्वज्ञान
 हे कल्याण से भरी हुई (अनुग्रह शक्ति)
 हे मातः

मातः

मध्यं

शिवे त्वयै

निरूपमाम्

भक्तिं

वितर

मुझे

तुम में ही जो शिव से अभिन्न है

अद्वितीय (जिस की कोई उपमान ही
मिलती ऐसी)

भक्ति (प्रेम)

दे

विद्ये मुण्डं हत्वा

प्रम्ब! हे माता
 गिरिपुः शुद्धरने
 यत् जो
 विद्येः ब्रह्माजी का
 मुण्डं सिर
 हत्वा काटकर
 करतले (उसे) हाथमें
 पात्रम् पात्र
 प्रकरते बनाया,
 यत् जो
 हरि विष्णु को
 शूल प्रोतं त्रिशूल में पिरोकर
 प्रस - कंधे के
 प्राभरततां भूषण भाव को
 प्रगमयत् पहुंचाया
 (उसे कंधे पर उठाया)
 यद्यपि और जो
 कंधे प्रपने गले को
 गलेन हलाहल विष से
 प्रलचके शोभायमान बनाया,
 तादिदमारिवलं तो वह यह सब कुछ
 ते तुम्ह
 शिवस्वायाः शिव के साथ प्रभिन भाव से
 शक्तेः उहरी हुई
 विलासितम् शक्ति का
 विकास है ॥

गिरिसुते!	हे पार्वती,
मातः!	हे माता,
त्वम्	तुम
विरिञ्चि -	४ ब्रह्मा जी
धारव्या	नाम वाली (प्राक्तिके
	रूप से
त्रिलोकीम्	तीनों लोकों की
सृजसि	सृष्टि करती हो
हरिसंज्ञा	विष्णु नाम वाली
	(बनकर)
प्रवसि	पालन (स्थिति) करती हो,
रुद्रारव्या	रुद्र नाम वाली (बनकर)
हंसि	विश्व का संहार करती हो,
ईश्वरदृशां	ईश्वर दृशा को भी
विदधासि	धारण करती हो,
सादारव्या	सदाशिव नाम वाली
	प्राक्ति बन कर
भवन्ती	बन कर
पाशौघ -	पाशों (बन्धनों) के समूहों को
धलेनी	काटने वाली
शिवयसि च	आनन्दमय भी बनाती हो,
त्वमेव	तुम ही
एका	एक ही (अनेकमय) होकर भी
कृतभेदैः	स्वातन्त्र्य से उत्पन्न किये हुए
	भेदों से
अनेका	अनन्त रूपों वाली
भवसि	बनती हो॥

प्रम्ब ! हे माता,

प्रमृदित- पूर्णतया हृष्टाये हृष्ट

कषायैः राग वाले (जिन मुनियों के चित्त में
से राग द्वेषादि दूर हो चुके हैं)

चकितचकितैः प्रत्यन्त भयभीत

मुनीनां मुनियों के

चेतोभिः बुद्धियों से

प्रपि भी

सततम् नित्य

मनाक् प्रणामात्र से भी

संसृष्ट स्पर्श करने के लिये

(जानने के लिये)

प्रह प्रणको ! प्रणम्य (मुनि भी तुम्हें जानने में प्रसमर्थ हैं)

पार्वति ! हे पार्वती,

श्रुतीनां वेदों के

ग्रन्थानः सिरबने हुए (उपनिषद्)

प्रकृति कठिनाः जो स्वभाव से ही कठिन हैं,

ते तुम्हारे

कोमलतर प्रति कोमल

पदकिसलय चरणा कमलों में

कथं किस प्रकार

पद स्थान

विन्दते पा सकते हैं॥

स्रम
 सन्तो
 भगवतीं
 तडिद्वलीं
 नित्यां
 पाररहितां
 प्रमृतसरितं
 ज्योत्स्नां
 मलोत्तीर्णां
 प्रगुणग्रंथि
 गहनाम्
 गिरा दूरा
 विद्यां
 प्रविनत -
 कुचां
 विश्वजननीं
 प्रपथन्तां
 लक्ष्मीं
 प्रभिदधति

अच्छे पुरुष (परमार्थ के जानने वाले)
 देवी को
 विद्युत् लता
 (परन्तु) प्रचल
 जिसका कोई पार नहीं ऐसी
 चिदमृत की नदी (
 चांदनी (परन्तु)
 (परन्तु) मलों रहित
 गुणों की ग्रंथियों से रहित
 प्रगस (प्रति सूक्ष्म तथा रहस्य)
 वाशियों से परे (परन्तु) (जो गुणों सहित है)
 सभी ज्ञान रूप (जो वा
 न भुके हुए
 ज्ञानक्रिया रूप स्तनों वाली (होते हुए भी)
 जगत् की माता (माता के स्तन भुक्त
 सीमा रहित
 लक्ष्मी
 इन इन स प्रनेक नामों से
 पुकारते हैं॥

गिरिस्ते!

प्रय
चेतन
पुमान्

इदं
शरीरं

चित्ति -

प्रमः

प्रभृति

रचितं

सुखं दुःखं च

कलयति

तव

समक्ष्यबाह्यः

स्फुटं

जानातोऽपि

देही

शरीराहंकारं

रहितं

न प्रभवति

हे पार्वती!

यह

चेतन

पुरुष

इस

शरीर को

पृथिवी तत्त्व

जल तत्त्व

इत्यादि पंच महाभूत का

बना हुआ

सुख तथा दुःख को

जानता है

तुम्हारे

सिद्धान्त को न जानने वाला

भली प्रकार

जानता हुआ भी

शरीरधारी (देहाभिमान प्रमाता)

शरीर के पर प्रमादभाव को

छोड़ने में

समर्थ नहीं बनता है॥

महाज्योत्स्ने
मातः

हे महा प्रकाशमयी
जगत को उत्पन्न तथा
पालन करने वाली देवी,

पिता
माता
भ्राता
सुहृद्
प्रनुचरः

पिता
माता
भाई

सह्य
गृहिणी
वपुः

मित्र
नौकर

पुत्र
मित्र
धनमपि

घर
पत्नी
परीर

यदा
मां
विजहति

पुत्र
मित्र
प्रौरधनभी

तदा
करुणया
मे

जिस समय (मरण काल पर)
मुझे
छोड़ दें

भयमोहान्धतमसां
भिन्दाना
सपदि
सन्निधिकरी भव

उस समय
दया करके
मुझे

भय, मोह रूप अन्धकार को
नाश करती हुई
तुरन्त ही

प्रत्यक्ष रूप से प्रकट हो जाये
(मुझे अपने साथ एकता करा दी जिये)

सबलमातः! हे सब की माता,

तुम
पहिले
किल निश्चय ही
दक्ष प्रजापति की
सुता पुत्री

उद्भूतः उत्पन्न हुईं,
तदनु इसके पश्चात्

ते उस (दक्ष को)
सदोषं दोष सहित को
हित्वा छोड़कर

गिरि शैलराजस्य हिमालय की
लग्नया बेटी (बनीं)

शम्भोः शम्भु की

प्रनयन्ता प्रादि प्रपन्त रहित
शक्ति भगवती शक्ति ऐश्वर्यवती

प्रपृथगपि प्रीतिः प्रभिन्न प्रीति होते हुए भी
भगवती

विवाहात् विवाह के कारण
शिव की पत्नी

प्रसि हो
प्रहृष्ट प्राश्न्य है कि

तव तुम्हारे
चरितं कर्तव्यों को
कः कौन

वेत्ति जान सकता है!

रवि - सूर्य
शशि - चन्द्रमा

कृशानु - प्रगिन

प्रभृतयः इत्यादि (सभी तेजधारी)

त्वद् तुम्हारी

ना दीप्तिनां अनन्त दीप्तिगों के (तेजों के)

कराः प्रति छोटे छोटे अंश हैं

तुद् प्रति तुच्छं (तुम्हारे अनन्त और अपार स्वरूप की प्रपेक्षा)

परं ब्रह्म परं ब्रह्म

नियतं निश्चय ही

तव तुम्हारे

प्रानन्दकारिका

प्रानन्द का एक करण है

शिवादि

शिव है

दित्यन्तं

पृथिवी तक

सर्वं

सारा विश्व

तव

तुम्हारे

त्रिवलयतनोः

जो तीन लपेट स्वरूप वाली हो

(कर्ता, क्रिया, कार्य)

(प्रमाता, प्रमारा, प्रमेय)

उदरे

बीच में है

प्राप्तते

ठहरा हुआ है

भागवती!

हे भगवती,

भक्तस्य हृदि

भक्त के हृदय में

चित्रं स्फुरति

(प्राश्न्य रूप से विकसित होती हो।

चित्रम्

यह आश्चर्य है॥

प्रम्ब!

यः

त्वया

जानीते

भवत्या एव

रचयति

सर्वतः

त्वया एव

इच्छति

यस्व यस्य

निरिवलाः

तनवः

त्वम्

असि

शम्भुः

साम्यं गतः

परमं व्योम

ब्रह्मते

तथापि

एवं

हित्वा

भवती

शिवस्य

विहरति

किमिदम्

हे माता,

जो ~~पुष्प~~ (शिव)

तुम्हारे ही स्वरूप से

(सब वेदों को) जानता है, (ज्ञान प्राप्ति)

तुम्हारे ही स्वरूप से

सृष्टि करता है, (क्रिया प्राप्ति)

नित्य

तुम्हारे ही स्वरूप से

इच्छा करता है (इच्छा प्राप्ति)

जिसे

सभी

स्वरूप

तुम ही

हो,

शिव

समभाव को पहुंच कर

उत्कृष्ट चिदाकाश को

धारण करता है,

तो भी

इस प्रकार

छोड़ कर

प्राप

शिव के साथ

कीड़ा करती हो,

यह ~~ख~~ कैसी, प्राश्नाय

की बात है॥

पुरः	प्रत्यक्ष
पश्चात्	परोक्ष (न जाना हुआ)
प्रन्तः	प्रन्तः कस्मिन् का विषय
बहिः	बहिष्कस्मिन् का विषय
परिपरिमितं	प्रतन्त
परिमितं	छोटा (संकुचित)
परं	सह उत्कृष्ट
स्थूलं	स्थूल
सूक्ष्मं	सूक्ष्म
सकुलं	विश्वमय
प्रकुलं	विश्वोत्तीर्ण
गुह्यम्	छिपाने योग्य
प्रगुह्यम्	प्रकट
द्वीयो	बहुत ही दूर
नेदीयः	प्रतिनिकट (प्रपने साथ ही रहने वाला)
सत्	सत्ता रूप
प्रसत्	प्रभाव (शून्य रूप)
इति	इन इन भिन्न भिन्न रूपों से
विश्वं	सारे जगत् को
भगवतीं	प्रकट प्रापका ही स्वरूप
सदा पश्यन्ति नित्यं (भक्त जन)	देखते हैं
भुवन -	सारे विश्व को
दोभ जननीम्	दोभ उदपन्न करने वाली (भेद मय बनाने वाली)
प्राज्ञां	प्राज्ञा को (स्वभाव को)
सदा वरुसि	सदा ही तुम धारण करती हो ॥

ॐ प्रम्ब! हे माता
 मयूखाः किररा
 पूषिण सूर्य में
 इव जैसे
 ज्वलन ॐ प्रग्नित में
 इव जैसे

तद्दीप्तिकणिकाः उसी प्रग्नित के कण
 पयोधौ सागर में
 कल्लोल - तंशों द्वारा
 प्रतिहत - छिपाये हुए
 महिम्नि महिमा वाले
 इव जैसे
 (वैसे ही)

तत्त्वैघाः सभी तत्त्वों के समूह
 उदेत्य उदेत्य बार बार उदये करके
 निजैः अपने अपने
 तात्त्विक कुलैः सह तेजोमय समूहों के साथ
 परवशाः परतंत्र हो कर (बे वश)
 त्वयि तुम्हारे ही स्वरूप में
 ॐ प्रनुकल्पं दृढ प्रकार से
 प्रशमम् शान्ति को
 भजन्ते प्राप्त करते हैं
 (तुम में ही लय हो जाते हैं ॥)

विद्युः	चन्द्रमा (प्रातःशक्ति)
विष्णुः	विष्णु (व्यापक)
ब्रह्मा	ब्रह्मा
प्रकृतिः	प्रकृति तत्त्व
प्रणुः	जीव
प्रात्मा	चित् शक्ति
दितकरः	सूर्य
स्वभावः	स्वभाव
जैनेन्द्रः	महावीर स्वामी
सुगतमुनिः	बुद्ध भगवान्
प्राकाशं	प्राकाश
प्रनिलः	वायु
शिवः	शिव
शक्तिश्च इति	पौर शक्ति
इष्टि	
एभिः	इन इन (भिन्नभिन्न)
विकल्पैः	विकल्पों से (नामों से)
त्वां	तुम
भगवती	भगवती को
तां	उस
श्रुतिविषयतां	सुनने का विषय
उपगतां	बनी हुई को
सन्तः	श्रेष्ठ पुरुष
अभिदधाति	पुकारते हैं॥

धन्याः	भाग्यवान् पुरुष
सहजदयया	प्रापकी स्वाभाविक दया से
दैष्टिकदृष्टा	(तया) उत्तम गुरुओं के अनुग्रह से
स्व मार्गं	अपने (सुषुम्ना) मार्ग में
प्रविष्ट्य	प्रवेश करके
षडध्व-	छः मार्ग रूप
ध्वान्तौघ-	अन्धकार (अज्ञान) के समूह के
च्छिदुर -	काटने के लिए
गणनातीत -	पर्यन्तरहित
करुणाम्	कर दया रूप (देवी को)
परानन्दकारं	परमानन्दरूप
तनुं	प्राप्ति को (स्वरूप)
अपि	भी
शिवयन्तीम्	कल्याणमय बनाती हुई
भगवतीम्	भगवती को
स्वमात्मानं	अपना ही स्वरूप
सपादि	भरपट (निश्चाय)
चिरं	अनन्त काल तक
उपलभन्ते	ज्ञान लेते हैं

भगवति!	हे देवी,
त्वं	तुम ही
शिवः	शिव रूप हो
त्वं	तुम ही
शक्तिः	शक्ति रूप हो
त्वं	तुम
समया	काल रूप हो
त्वं	तुम
समयिनी	सिद्धान्तकर्त्री हो
त्वं	तुम ही
प्रात्मा	प्रात्मा हो
त्वं	तुम ही
दाता	उपदेष्टा रूप हो
त्वं	तुम ही
प्रयं	यह
प्रणिमादिः	प्रणिमादिक सिद्धियां हो
गुण गराः	(तुम ही) गुणों का समूह हो (सत्त्व, रज, तम)
त्वं	तुम ही
प्रविद्या	प्रज्ञान रूप हो
त्वं	तुम ही
विद्या	ज्ञान रूप हो
निश्चलं	सभीकुछ
त्वमासि	तुम ही हो,
किमपरं तत्त्वं	कौन सा दूसरा तत्त्व
त्वत्तो पृथक्	तुम से भिन्न है
इमे (वयं)	ऐसे हम (इस बात को)
न विदामहे	नहीं जानते हैं॥

जननि!	हे माता,
प्राचीनैः	पिछले
प्रसंख्यैः	जोगिने नहीं जासकते इतने
जननैः	जन्मों द्वारा
कर्मविलयात्	कर्मों के नष्ट होने से
जन्मनि	जन्मों के
प्रन्ते गते	प्रन्त होने पर (जीवन्मुक्त दृष्टा प्राप्त करके भी)
गुरुवपुषम्	गुरुवर के स्वरूप
गिरिशम्	शिव को
प्रासाद्य	प्राप्त करके (साक्षात्कार करके)
शैवीं	शिव रूप
प्राप्तां	सिद्धान्त को (अद्वैतवैतन्यमार्ग)
प्रवाच्य	पाकर (उसका मनन तथा निधिध्यासन करके)
क्रमतनुरपि	सकम शरीर धारण करता हुआ भी
	(मनुष्य शरीर)
त्वां	तुम्हें
विदितवान्	जानता रहूँ
	और
त्वत्-	तुम्हारी
पूजा हवति-	पूजा तथा हवति इत्यादि के
किञ्चनेन एव	बनाने और करने में ही
दिवसान्	इस जन्म के पौष दिन
नयेयम्	ज्योती करूँ
	(यह मेरी प्रार्थना है॥)

यत्	जो
षट्पत्रं	ॐ: पत्तों वाला
कमलम्	कमल
उदितं	खिलता हुआ
तस्य	उस कमल की
या	जो
करींकारुष्या	करींका नाम वाली
योनिः	
तस्याः	उस (योनि) के
उदरे	बीच में
यत् तत्	जो प्रलौकिक
ओंकार पीठम्	ओंकार रूप पीठ
प्रथितं	प्रकट है
तस्मिन् प्रन्तः	उस (ओंकार पीठ) के अन्तर
कुचभरनतां	(ज्ञान क्रिया रूप) हस्तों के
	बोझ से भुकी हुई
कुण्डलीतः	
प्रवृत्तां	प्रवृत्त हुई
पूयामाकारां	पूयामवर्ण
सकल जननीं	सब को उत्पन्न तथा पालन
	करने वाली देवी को
सन्ततं	बारम्बार
भावयामि	भावना करता हूँ॥

सकल जनाने!	हे जगत् को उत्पन्न करने वाली,
या	जो (तुम)
एकाऽप्रपि	एक रूप होते हुए भी
भुवि	पृथिवी में
पयसि	जल में
कृष्णानौ	प्रमि में
मारुते	वायु में
खे	आकाश में
शुशाङ्के	चन्द्रमा में (प्रमेय)
सवितारि	सूर्य में (प्रमारा)
यजमाने	यज्ञ करने वाले में (प्रमाता)
अष्टधा	आठ प्रकार से की
शक्तिः	शक्ति
कुर्वन्भार्या	हस्तों के बोझ से भुकी
विमलाऽप्रपि	भुकी हुई भी
विश्वं	जगत् को
वहति	धारण करती है
सा त्वं	वही तुम
मां	मुझे
पहि	रक्षा करो
शक्तिऽप्रवक्ष्याम	यह अवश्य बात है॥

سور
۲۰
۳۵
۴۰

سور
۲۰
۳۵
۴۰

سور
۲۰
۳۵
۴۰